Retail Price ₹ 20

दिसम्बर 2025

दादावाणी

ये सभी भय सिग्नल जानने ही पड़ेंगे न? यह तो आत्मघाती तत्व कहा जाएगा।
मोक्षमार्ग में बाधक हो उसे छोड़ देना और आगे बढ़ना फिर से।
चाहे कैसे भी कठिन परिस्थिति में भी खुद का ध्येय नहीं चूके, ऐसा होना चाहिए।

दिवाली और नये साल का महोत्सव ता. 20 और 22 अक्तूबर 2025

पूजन

अन्नकूट

आरती

दर्शन

जगमगाता त्रिमंदिर

परम पूज्य दादा भगवान का 118वाँ जन्मजयंती महोत्सव : मोरबी : ता. 3 से 9 नवम्बर 2025

स्वागत

दीप प्राकट्य

सांस्कृतिक कार्यक्रम

सत्संग

वर्ष : 21 अंक : 2
अखंड क्रमांक : 242
दिसम्बर 2025
पृष्ठ - 32

Editor : Dimple Mehta
© 2025
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधरसिटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन: 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए: +91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
5 साल
भारत : 1000 रुपये
वार्षिक
भारत : 200 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

विविध प्रकार के नशे के परिणाम

संपादकीय

मोक्षमार्ग में चढ़ने के रास्ते का जितना महत्व है, उसके बजाय फिसलने वाले स्थानकों पर सतर्कता अनेक गुना महत्वपूर्ण है। इस मार्ग में फायदा प्राप्त करने के बजाय नुकसान को कैसे रोकें, वह बहुत ज़्यादा महत्वपूर्ण है। ऊपर चढ़ते-चढ़ते जो 'डेन्जरस पोइन्ट्स' आते हैं, उनकी लालबतियाँ कहीं भी नहीं मिलतीं। प्रस्तुत अंक में, परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) तीन प्रकार के नशे की जोखिमदारी बताते हैं। : 1. विषयों की इच्छा की मूर्छा। 2. दारू पीना। 3. कैफ का नशा - अहंकार का कैफ, 'मैं-मैं' करता है, वह। ऐसे हर एक प्रकार के दारू के नशे किस तरह से ज़ोखिमी हैं, उनकी विस्तृत जानकारी खुली कर रहे हैं।

कलियुग में विषयों की इच्छा की मूर्छा मनुष्य को मूर्छित कर देती है। जैसे पटाखे में बारुद भरा हुआ है उसका लक्ष रहा करता है, उसी तरह इन जीवित मनुष्यों में किस प्रकार का दारू भरा हुआ है, वह मोह की वजह से पत्ता नहीं चलता। विषय में चित्त एक जगह पर स्थिर हुआ, वह मूर्छित हो गया यानी वह और शराबी दोनों सरीखे हो गए। इस विषयरस के दारू का नशा ही ऐसा है कि जो आत्मा प्राप्त हुआ है उसे भी फिंकवा दे। इस ज्ञान के साथ हमें शुद्धात्मा में ही सुख है, ऐसा यथार्थ रूप से समझ में आ जाए तो विषय में सुख नहीं लगेगा।

दादाश्री दारू के पेय के सामने लालबत्ती दिखाते हैं कि, दारू का व्यसन तो मनुष्य को बेहोश कर देता है, दिमाग को नुकसान होने से मनुष्य जड़ जैसा हो जाता है। दारू के परमाणु में गतिशील त्रस जीवों का भरपूर रस है, जो धर्म को खत्म कर देता है और ज्ञानी को भी अज्ञानी बना देता है। यह दारू पिएँ तो दारू के नशे से आत्मा मूर्छित हो जाता है। इसलिए फिर ज्ञान सब खत्म हो जाता है। अत: इस दारू को छूने जैसा ही नहीं है।

अहंकार का स्वभाव ऐसा है कि जैसे ही वह बड़ा होता है वैसे ही कहने लगता है कि मैं तो जानता हूँ सब कुछ, 'मैं कुछ हूँ' का 'कैफ' रहता है, उससे आवरण आते हैं। देहाध्यास गया न हो और 'मैं जानता हूँ' बोले तो वह स्वच्छंद कहलाता है। स्वच्छंद से तो जिनके आश्रित रहे हैं, उनकी अधीनता टूट जाती है। दादाश्री कहते हैं कि यदि कोई दारू पीकर आया हो और वह कहे कि 'साहब, मुझमें अक़्ल नहीं है, मेरा हल ला दीजिए' तो वह पात्र कहलाता है, पानी डालने पर उसका नशा उतर जाएगा परंतु यह 'मैं जानता हूँ' का कैफ रूपी सूक्ष्म दारू का नशा नहीं उतरेगा।

ज्ञानप्राप्ति के बाद अंदर का सुख प्राप्त हो जाने के बावजूद दारू-माँसाहार, परस्त्री-परपुरुष गमन जैसे लोकनिंद्य व्यवहार से सुख प्राप्ति की वृत्ति से कर्म का चार्जिंग जारी रहता है। ये दोष आत्मजागृति को खत्म कर देते हैं, इसलिए यह तो होना ही नहीं चाहिए। ज्ञान के बाद अहंकार निकाली रहता है फिर भी उसमें सर्तक रहने जैसा है। मनुष्यपन में तो 'खुद' को परमात्मा होना है अत: ज्ञानी पुरुष की समझ से समझ मिलाकर हर एक प्रकार के दारू के नशेरूपी भयस्थानों से मुक्त होकर एकावतारी मोक्ष का पुरुषार्थ कर सकें, ऐसी हृदयपूर्वक की अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

विविध प्रकार के नशे के परिणाम

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलतः गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

तीन प्रकार के दारू :

1. विषयों की इच्छा की मूर्छा। 2. दारू का पेय। 3. कैफ का नशा - अहंकार का कैफ, 'मैं-मैं' करता है वह।

1. विषयों की इच्छा की मूर्छा

मूर्छा से विषय की मिठास

अब (विषय में) कहीं भी मीठा लगता है क्या?

प्रश्नकर्ता : मीठा तो लग जाता है, लेकिन वह ज़ोखिमदारी है, ऐसा समझ में आता है।

दादाश्री : जहाँ तक मीठा लग रहा है न, ज़ोखिमदारी भले ही लग रही हो, लेकिन जब मीठा लगने लगे वहाँ पर वह कभी न कभी ज़ोखिमदारी भुला देगा। कर्म के उदय ऐसे-ऐसे आते हैं कि ज़ोखिमदारी भुला देता है। और यह मीठा किस हिसाब से लगता है, वही मुझे समझ में नहीं आता। इसमें कौन सा भाग मीठा है?

प्रश्नकर्ता : वह क्या भ्रांति से मीठा लगता है?

दादाश्री : भ्रांति से मीठा लग रहा हो, तो भी अच्छा। यह तो भ्रांति भी नहीं है। इसे कौन मीठा कहेगा?

प्रश्नकर्ता : विषय में सब से ज़्यादा मिठास मानी है, तो किस आधार पर मानी है?

दादाश्री : वह मिठास जो उसे महसूस हुई और अन्य किसी जगह पर मिठास देखी नहीं है, इसलिए उसे विषय में बहुत मिठास लगती है। अगर देखने जाएँ तो सब से ज़्यादा गंदगी वहीं पर है, लेकिन मिठास की वजह से उसे मूर्छा आ जाती है इसलिए उसे पता नहीं चलता। यदि इस विषय को गंदगी समझे तो उसकी सारी मिठास गायब हो जाएगी।

जगत् के लोगों ने विषय में सुख की कल्पना की। विषय अर्थात् निरी गंदगी, उसमें कहीं सुख होता होगा? विषय, वह संडास है। नाक-कान में से, मुँह में से, सब जगहों से जो कुछ भी निकलता है, वह सब संडास ही है। डिस्चार्ज, वह भी संडास ही है। जो परिणामिक भाग है, वह संडास है लेकिन तन्मयाकार हुए बिना *गलन* नहीं हो सकता।

मूर्ख लोगों की मान्यता का सुख

प्रश्नकर्ता : इसमें सच्चा सुख नहीं है, लेकिन एकदम लिमिटेड टाइम (मर्यादित समय) के लिए तो है, फिर भी यह छूटता नहीं है न!

दादाश्री : नहीं, इसमें सुख है ही नहीं! यह तो मान्यता ही है सिर्फ! यह तो मूरख लोगों

की मान्यता ही है! विचारशील मनुष्य विषय में सुख कैसे मान बैठा है, उसी पर मुझे आश्चर्य होता है? विषय का पृथक्करण करे तो दाद को खुजलाने जैसा है। हमें तो बहुत विचार आते हैं और लगता है कि अरेरे! अनंत जन्मों से यही किया! जितना कुछ हमें पसंद नहीं है, वह सब कुछ विषय में है। निरी दुर्गंध है! आँखों को देखना अच्छा नहीं लगता, नाक को सूंघना अच्छा नहीं लगता। कान को नहीं रुचता, सिर्फ चमड़ी को रुचता है। लोग तो पैकिंग को देखते हैं, माल को नहीं देखते। जो चीज़ पसंद नहीं है, पैकिंग में तो वही चीज़ें भरी हुई हैं। निरी दुर्गंध का बोरा है! लेकिन मोह के कारण भान नहीं रहता और इसीलिए तो पूरा जगत् चकरा गया है।

यह बांद्रा स्टेशन की जो खाड़ी आती है, उसकी दुर्गंध पसंद है? उससे भी बुरी दुर्गंध इस पैकिंग में है। आँखों को पसंद नहीं आएँ, ऐसे चित्र-विचित्र पार्ट्स अंदर हैं। इस बोरे में तो बेहद विचित्र गंदगी है। यह अपने अंदर जो हृदय है, उसी लौंदे को निकालकर आपके हाथ में दे दे तो? और कहे कि अपने साथ हाथ में रखकर सो जा, तो? नींद ही नहीं आएगी न? यह तो समुद्र के विचित्र जीव जैसा दिखता है। जो पसंद नहीं है, वह सब कुछ इस देह में हैं। ये आँखें यों बहुत सुंदर दिखती हों, लेकिन मोतियाबिंद हो जाए और उन सफेद आँखों को देखा हो तो? अच्छा नहीं लगेगा। ओहोहो! सब से ज़्यादा दु:ख इसी में है। यह दारू जो नशा चढ़ाती है, उस दारू की दुर्गंध मनुष्य को अच्छी नहीं लगती और यह विषय तो सर्व दुर्गंध का कारण है। सभी नापसंद चीज़ें वहाँ पर हैं। अब क्या होगा यह आश्चर्य? इसमें से छूट गए तो फिर राजा। विषय के बारे में गहराई से सोचने पर यही लगता है कि यह गटर तो खोलने जैसी है ही नहीं। कितना सारा बंधन! यह जगत् इसीलिए खड़ा है न!

नहीं बुझेगी वह प्यास कभी

जीवमात्र क्या खोज रहा है? सुख ही खोज रहा है। इतने पैसे हैं, फिर भी पैसों में सुख नहीं मिलता। पत्नी है पर उससे भी सुख नहीं मिलता! इसलिए फिर (दारू की) बोतल मँगवाकर, ज़रा पीकर सो जाता है! उसे चखने के बाद खुद तय करता है कि इसमें कुछ भी सुख नहीं है। फिर खुद वह सब छोड़ता जाता है और आगे नया खोजता ही जाता है, लेकिन उसे तृप्ति नहीं होती। संतोष होता है लेकिन तृप्ति नहीं होती। संतोष उसे कहा जाता है कि इच्छा पूरी हो जाए, तब संतोष होता है। खाने की इच्छा हुई फिर हम खाना खाएँ, तब संतोष होता है लेकिन तृप्ति नहीं होती। तृप्ति यानी फिर से उस चीज़ की इच्छा ही नहीं हो।

प्रश्नकर्ता : हमने किसी चीज़ की इच्छा की हो और हमें वह चीज़ नहीं मिले तब अंदर जलन शुरू होती है न?

दादाश्री : इच्छा, वही अग्नि है। इच्छा हुई यानी दीयासलाई जलाकर सुलगाना। फिर जब तक वह नहीं बुझती, तब तक जलन होती रहती है। इच्छा तीव्र है या नरम, उस पर जलन आधारित है। बहुत तीव्र इच्छा हो तो बहुत जलन पैदा होती है। यह विषय की इच्छा तो बहुत जलन पैदा करती है, ज़बरदस्त जलन पैदा करती है। इसलिए ऐसा कहा है न, कि विषय में पड़ना ही नहीं, वह बहुत जलन देता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो किसी ने बताया ही नहीं था न!

दादाश्री : लोगों को सब घोटाले वाला चाहिए। इसलिए कोई कहेगा ही नहीं न! लोग खुद गुनहगार हैं इसलिए वे बोलेंगे ही नहीं न! जो गुनहगार नहीं हैं, वे ही बोलेंगे। क्योंकि एक ही बार का विषय, वह कितने ही दिनों तक मनुष्य की भ्रांति छूटने नहीं देता! भ्रांति यानी डिसीज़न (निर्णय) नहीं आ पाता कि यह आत्मा का सुख है या विषय का सुख है, इसका भान नहीं होने देता! ये लोग माँस की पुतली हैं ऐसा क्यों भूल जाते होंगे? ऐसा है न, मूर्छावश वह उसमें से जैसे-जैसे सुख लेता है, वैसे-वैसे उस पर मूर्छा छाती जाती है और यदि छः-बारह महीनों तक उसमें से सुख नहीं ले, तब फिर उसकी मूर्छा जाएगी। तब फिर उन्हें रेशमी चद्दर में लिपटा हुआ माँस ही दिखाई देगा!

अद्‌भुत प्रयोग, थ्री विज़न का

यों खून में माँस के टुकड़े पड़े हों, तो आपको उन्हें देखना अच्छा लगेगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : यह विषय कैसे खड़ा है, वही समझ में नहीं आता। वह खुली आँखों से सो रहा है तो, उस सोने वाले का क्या करें? लोग तो 'देह के अंदर क्या है' वह नहीं जानते। तू रॉकेट (आतिशबाज़ी) लाए तो तुझे पता चलेगा न, कि इसमें बारूद भरा हुआ है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो इसमें क्यों पता नहीं चलता? पटाखा का तो *लक्ष* में रहता ही है कि यह बारूद से भरा हुआ है। यह फूटा नहीं है, अभी फूटना बाकी है और यह फूट चुका है, ऐसा पता चलता है न? और इस जीवित मनुष्य में कैसा बारूद भरा हुआ है, इसका क्यों पता नहीं चलता? इसमें कौन-कौन सा बारूद भरा है?

प्रश्नकर्ता : हड्‌डियाँ, खून, माँस।

दादाश्री : अभी एक पोटली में रेशमी चादर से हड्‌डियाँ और माँस बाँध लिए, फिर उसे यहाँ पर लाकर रख दिया हो तो तुझे वह *लक्ष* में तो रहेगा न, कि इसमें यह भरा हुआ है?

प्रश्नकर्ता : रह सकता है न!

दादाश्री : तो ठीक है, जिसे यह लक्ष में रहे, उसे बड़ा अधिपति कहा गया है, वह जाग्रत कहलाता है। इसलिए मुझे तो बहुत जागृति रहती है, ज़बरदस्त जागृति रहती है!

मैंने जो प्रयोग किया था, उसी प्रयोग का उपयोग करना है। हमारे अंदर वह प्रयोग निरंतर आयोजित ही होता है, इसलिए हमें ज्ञान होने से पहले भी जागृति रहती थी। यों किसी स्त्री ने सुंदर कपड़े पहने हों, दो हज़ार की साड़ी पहनी हो फिर भी देखते ही तुरंत जागृति खड़ी हो जाती थी, वह नेकेड (बिना कपड़ों के) दिखती थी। फिर दूसरी जागृति उत्पन्न होती थी, तो बिना चमड़ी की दिखती थी और तीसरी जागृति में फिर पेट काट दिया हो तो अंदर आंते दिखती थी, आंतों में क्या-क्या परिवर्तन होता है, वह सब कुछ दिखता था। अंदर खून की नसें दिखतीं, संडास दिखता, इस तरह सारी गंदगी दिखती थी। फिर विषय खड़ा हो ही नहीं सकता न! हमें सब कुछ आर-पार दिखता है। इनमें से सिर्फ आत्मा ही शुद्ध वस्तु है, वहाँ जाकर हमारी दृष्टि रुकती है, फिर मोह कैसे होगा? लोगों को इस तरह आर-पार दिखता नहीं है न! लोगों के पास ऐसी दृष्टि नहीं है न! ऐसी जागृति लाएँ भी कहाँ से? ऐसा

दिखना, वह तो बहुत बड़ी जागृति कहलाती है। एट-ए-टाइम ये तीनों ही जागृति (थ्री विज़न) रहती हैं। मुझे जैसी जागृति थी, वह आपको बता रहा हूँ। जिस तरीके से मैं जीता हूँ, वह तरीका आप सभी को, यह जीतने का रास्ता बता दिया। रास्ता तो होना चाहिए न? और जागृति के बिना तो ऐसा कभी होगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : थ्री विज़न नहीं दिखता है, क्या वह मोह के कारण है?

दादाश्री : जानता ही नहीं है, थ्री विज़न क्या है, वह! थ्री विज़न जान ले तो उसकी दृष्टि आकृष्ट ही नहीं होगी। थ्री विज़न दिखें तो उसमें पड़ेगा ही नहीं। जबकि यह तो मोह के कारण भान में ही नहीं आता और मोह यानी मूर्छा!

भयंकर ज़ोखिम, अणहक्क के विषय

मोहराजा ने अंतिम पांसा फेंका है। अभी सर्वत्र विषय का ही मोह व्याप्त हो गया है। पहले तो मान का मोह, कीर्ति का मोह, लक्ष्मी का मोह, मोह सर्वत्र बिखरा हुआ था। आज सारा मोह सिर्फ विषय में ही व्याप्त हो गया है और भयंकर जलन में ही जीवन जी रहे हैं।

जो हमें मूर्छित कर दे, *बेभान* (बेहोश) कर दे, उसे मोह कहते हैं। किसी व्यक्ति के घर पर उसकी रूपवान स्त्री है, फिर भी रास्ते में उसने किसी एक स्त्री को देखा। तो जिस प्रकार उस लड़की का चित्त साड़ी में रह गया था उसी प्रकार इस व्यक्ति का चित्त उस स्त्री को देखकर उसी में रह जाता है इसलिए उसे मूर्छित हो गया कहते हैं। चित्त खो गया, एक जगह पर स्थिर हो गया, तो वह है मूर्छित दशा! मूर्छित हो गया तो फिर उसमें क्या शक्ति रही? मूर्छित हो गया इसलिए वह और शराबी दोनों एक सरीखे हो गए। उसमें फिर कोई बरकत नहीं आती।

जब तक रूप पर मोह है, तब तक शादी कर लेनी चाहिए। शादी करना आवश्यक है और शादी करना बहुत बड़ा ज़ोखिम है और ज़ोखिम उठाए बिना पार आए ऐसा भी नहीं है। जिसे मोह है, उसे शादी कर ही लेनी चाहिए। वर्ना हरहाया पशु बन जाएगा। किसी के खेत में घुसा कि मारा जाएगा और भयंकर अधोगति को न्यौता देगा! शादी यानी क्या कि हक़ का भोगना, और उसमें तो *अणहक्क* का विचार आए तो अधोगति में जाएगा!

सिर्फ यही एक रोग ऐसा है कि जो नर्क में ले जाता है और यदि नर्क में गया तो फिर ज्ञानीपुरुष नहीं मिल पाएँगे, यह सत्संग नहीं मिलेगा! मोक्षमार्ग हाथ से निकल जाएगा! यानी कि परस्त्रीगमन, परस्त्रीविचार नर्क में ले जाते हैं! सबसे बड़ा ज़ोखिम यही है! अपने यहाँ पर ज्ञान लेने के बाद भी ऐसे दोष करने वाला तो सीधा नर्क में जाएगा क्योंकि ज्ञान लेने के बाद तो दग़ा कहलाएगा। ज्ञानी के साथ दग़ा कहलाएगा और सत्संग के साथ भी दग़ा कहलाएगा। भयंकर दग़ा कहलाएगा, इसलिए नर्क का अधिकारी हो जाएगा। इसीलिए हम बार-बार सावधान करते रहते हैं।

अपने यहाँ इस सत्संग में ऐसे छल-कपट का विचार आए तो यहाँ ऐसा व्यवहार किंचित् मात्र भी नहीं चलेगा। और ऐसा व्यवहार चल रहा है, ऐसा यदि कभी मेरी जानकारी में आया तो मैं जला दूँगा, भयंकर रूप से जला दूँगा। इस जगह पर किंचित् मात्र भी ऐसा नहीं चलेगा, यह संघ ऐसा नहीं है, यहाँ पर ऐसी भूल नहीं कर सकते।

इस विषयभोग के परिणाम तो कैसे!

अरे, विषय में सुख होता होगा? इन कुत्तों को भी यदि खाना-पीना दिया हो न, तो वे भी बाहर नहीं जाते। ये बेचारे तो भूख के कारण बाहर घूमते रहते हैं! ये मनुष्य सारा दिन खाकर घूमते रहते हैं! मनुष्यों का भूख का दुःख मिटा है तो उन्हें विषयों की भूख लगी है। मनुष्य में से पशु बनने वाला हो, तभी तक विषय है लेकिन जो मनुष्य परमात्मा बनने वाला है उसमें विषय नहीं होता। विषय तो जानवरों की 'कोड लैंग्वेज' (सांकेतिक भाषा) है, पाशवता है, 'फुल्ली' (पूर्ण) पाशवता है। अत: वह तो होनी ही नहीं चाहिए।

पूरी दुनिया ब्रह्मचर्य को एक्सेप्ट (स्वीकार) करती है। फिर जिनसे ब्रह्मचर्य पालन नहीं किया जा सकता, वह अलग बात है। अब्रह्मचर्य तो मनुष्य में रही हुई पाशवता है। हर एक जगह पर अब्रह्मचर्य को पाशवता माना गया है। इसलिए तो दिन में अब्रह्मचर्य के लिए मना किया गया है। क्योंकि वह पाशवी उपचार है। इसीलिए रात को, अंधेरे में, कोई देखे नहीं, जाने नहीं, खुद की आँखें भी नहीं देखें, उस तरह किया जाता है। मनुष्य को तो क्या यह सब शोभा देता है? इसीलिए तो लोगो ने ऐसा रखा है कि विषय का सेवन रात के अँधेरे में ही किया जाना चाहिए। सूर्यनारायण की उपस्थिति में यदि विषय सेवन करोगे तो हार्टफेल के आसार पैदा होंगे। हाई ब्लडप्रेशर या लो ब्लडप्रेशर हो जाएगा और हार्टफेल हो जाएगा। विषय, वह अँधेरे में सेवन करने की चीज़ है। लिखा है न कि, 'छिपे रखने पड़ते हैं जो काम।' यानी यह विषय कैसी चीज़ है? गुप्त रखना पड़ता है। किसी से कहा भी नहीं जा सकता। फिर भी शास्त्रकारों ने अलाउ किया (अनुमति दी) है कि सभी की उपस्थिति में शादी करते हो, इसलिए हक़दार हो।

कितना शर्मनाक?

प्रश्नकर्ता : दादाजी ब्रह्मचर्य पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं और अब्रह्मचर्य के प्रति तिरस्कार दिखाते हैं। लेकिन ऐसा करने से तो सृष्टि में मनुष्यों की संख्या भी कम हो जाएगी, तो इस बारे में आपका क्या अभिप्राय है?

दादाश्री : इतने सारे ऑपरेशन करने से भी संसार कम नहीं हो रहा है तो ब्रह्मचर्य पालन करने से क्या कम होगा? संसार घटाने के लिए तो ऑपरेशन करवाते हैं, लेकिन फिर भी नहीं घटता है न! ब्रह्मचर्य तो बहुत बड़ा साधन है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसे तिरस्कार हुआ नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : तिरस्कार नहीं कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह जो 'नैचुरल प्रोसेस' (प्राकृतिक प्रक्रिया) है, उसका हम तिरस्कार कर रहे हैं, ऐसा नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : नैचुरल प्रोसेस नहीं है, यह तो पाशवता है। मनुष्य में यदि नैचुरल प्रोसेस होता, तो ब्रह्मचर्य पालन रहता ही नहीं न! ये जानवर बेचारे ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, सिर्फ कुछ सीज़न में ही पंद्रह-बीस दिनों के लिए विषय, फिर कुछ भी नहीं।

यह तो हमेशा विषय, तो पशु ही हैं न, मनुष्य पशु ही हो गए हैं न! इसलिए यह कहना पड़ रहा है न मुझे! तभी तो यह ओपरेशन करने की नौबत आई न, किसी गाय-भैंस का ओपरेशन करने की नौबत आई है कभी?

इनकी तो आबादी नहीं बढ़े इसलिए नसबंदी करने लगे हैं, मनुष्यों की। पहले बैलों की नसबंदी

करते थे, आज मनुष्यों की नसबंदी कर रहे हैं। कितनी शर्मनाक बात है!

ये नसबंदी करवाते हैं न, वह गलत है। नसबंदी करवाते हैं क्या लोग? सरकार क्या कहती है, नसबंदी करवाइए?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी, कहते हैं करवाइए और लोग खुद जाकर करवाते हैं।

दादाश्री : सरकार कहती है एक, दो और तीन, हम दो हमारे दो और बाकी सब नसबंदी! हम क्या कहते हैं कि चार बच्चे हो जाएँ, लेकिन उसके बाद भी ब्रह्मचर्य पालन कर न! और संसार में स्त्री के साथ रहते हुए भी ब्रह्मचर्य यानी क्या? कि महीने में चार दिन या पाँच दिन ठीक है, यानी बारह महीने में पचास-साठ दिन हुए। लेकिन यह तो सुबह हुई, शाम हुई, और यही धंधा। फिर पत्नी सवार हो जाती है। कुछ लोगों की पत्नी तो उनसे 'याचना' करवाती है। पुरुष माँग करते हैं, विषय की भीख माँगते हैं ये हिन्दुस्तान के लोग, ऋषि-मुनियों के पुत्र। शर्म आए ऐसी चीज़ है! विषय की भीख माँगते हैं, आपको नहीं लगता? यह शर्मनाक नहीं लगता?

प्रश्नकर्ता : शर्मनाक ही है।

बुद्धिशाली भी पत्नी के सामने बुद्धू

दादाश्री : अरे, ये तो रोज़ झगड़ते हैं। रोज़ विषय में, जैसे कुत्ते हों और कुछ तो पत्नी से विषय की माँग करते हैं, 'बीवी, आप यह दो न।' अरे भाई! पत्नी से माँग की? तूने यह कैसी खोज की? देखो न, ये पाशवता हो गई है। बड़े-बड़े अफसर, यानी निरी पाशवता हो गई है। हमें क्या ऐसा शोभा देता है? विषय करते समय कोई व्यक्ति, अभी यदि कोई बड़ा साहब विषय कर रहा हो, उस समय फोटो लें तो फोटो कैसा दिखेगा? बड़े साहब को दिखाएँ तो?

प्रश्नकर्ता : घृणा हो ऐसा।

दादाश्री : तो फिर ऐसे शर्म नहीं आती? खुद का फोटो नहीं दिखाई देता कि मैं कुत्ते जैसा हूँ या गधे जैसा हूँ? ऐसी शर्म नहीं आती खुद को?

यों तो पर्सनालिटी वाला अफसर होता है, जिसके आगे बाहर सभी ता-ता-थई-थई करते हैं, लेकिन विषय भोगते समय तो वह जानवर जैसा ही बन जाता है न! अन्य किसी चीज़ में जानवर नहीं बनता, दारू में भी वह जानवर नहीं बनता।

फिर भी स्त्रियों का तिरस्कार नहीं करना है, स्त्री का दोष नहीं है। यह तो आपकी वासनाओं का दोष है। स्त्री का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। स्त्रियाँ तो देवियाँ हैं। विषय के प्रति तिरस्कार नहीं है, वासना पर तिरस्कार है और यह वासना फिर देखा-देखी से है!

प्रश्नकर्ता : पशु तो भोगप्रधान हैं, इसलिए करते हैं, लेकिन मनुष्य तो विचारवान है, फिर भी ऐसी स्थिति है!

दादाश्री : लेकिन पशु जैसे भी गुण नहीं रहे। पशु तो नियम में होते हैं। जब कुदरती संयोग आ मिलते हैं, तब पशु में पाशवता उत्पन्न होती है। लेकिन इन मनुष्यों में तो नित्य पाशवता है। मनुष्य में मनुष्यत्व रहा ही कहाँ है? और पशुओं में छल-कपट कुछ भी नहीं होता न! यह तो निरंतर छल-कपट का ही शिकार होना, निरंतर छल-कपट!

बाकी, ये मनुष्य तो जानवर से भी गए बीते हैं! उनका तो रोज़ यही तूफान होता है। नीयत ही यही। अब विषय-विकार यानी क्या है? जिस

विषय से संतान पैदा नहीं होती, वह विषय संडास कहलाता है। जो पशु में भी नहीं होता, मनुष्यों की लीला देखकर अचरज ही होगा न!

विषय के स्वार्थी होते हैं अंधे

प्रश्नकर्ता : ये जो टकराव और कषाय होते हैं, उनकी जड़ विषय ही है न?

दादाश्री : हाँ, सब कुछ विषय के कारण ही है। वह विषय में एक्सपर्ट हो जाता है। विषय में 'टेस्टफुल' (रुचिकर) हो जाता है, इसलिए अंदर स्वार्थ रहता है और स्वार्थ के कारण टकराव होते हैं। जहाँ स्वार्थमय परिणाम होते हैं, वहाँ कभी कुछ भी दिखाई नहीं देता। स्वार्थी हमेशा अंधा होता है। स्वार्थी, लोभी और लालची, सभी अंधे होते हैं। इस दुनिया का पूरा आधार पाँच (इन्द्रियों के) विषय पर ही है। जिनमें विषय नहीं है, उनमें टकराव नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान सहित हो तो तुरंत 'ब्रेक' लगाया जा सकता है?

दादाश्री : कुछ भी कहा नहीं जा सकता, वापस फिसल भी सकता है। ज्ञान वाले भी स्लिप हो जाते हैं।

अवस्था सिखाएँ वैराग्य पाठ

अक्रम यानी क्या? कर्म खपाए बिना ज्ञान प्राप्त हुआ है। अभी तक किसी प्रकार के कर्म नहीं खपाए हैं। अत: बात को समझ लेना है। इसमें अन्य कुछ बाधक नहीं है! और यह विषय एक ऐसी चीज़ है कि इस ज्ञान को उलट दे। सिर्फ यह विषय ही ऐसा है। अन्य सब कुछ भले ही रहा। जीभ के विषय वगैरह, वे सभी दावा नहीं करते। वे चेतन के साथ नहीं हैं। वे अचेतन हैं और यह तो मिश्रचेतन है। इसलिए इस विषय में तो आपकी इच्छा नहीं हो फिर भी वश में होना पड़ता है, वर्ना वह दावा कर सकती है और कभी भटका भी सकती है। अत: इसमें बहुत जागृति रखना। यह विषय है ही ऐसा कि भटका दें। हमने जो आत्मा दिया है, उसे भी फिंकवा दें।

इन सब को अवस्था दृष्टि से देखने पर ही उसका असर होता है। यदि उसे यह समझ में आ जाए कि यह गर्भ में थी तब ऐसी दिखती थी, जन्म हुआ तब ऐसी दिखती थी, छोटी बच्ची थी तब ऐसी दिखती थी, फिर ऐसी दिखती थी, आज ऐसी दिखती है, फिर ऐसी दिखेगी, बूढ़ी होने पर ऐसी दिखेगी, पक्षाघात होगा तब ऐसी दिखेगी, अर्थी उठेगी तब ऐसी दिखेगी, ऐसी सभी अवस्थाएँ जिनके लक्ष में हैं, उन्हें वैराग्य सिखाना नहीं पड़ता! यह तो, आज जो दिखता है, उसे देखकर ही जो मूर्छित हो जाते हैं, उन्हें वैराग्य सीखना हैं। वीतराग तो बहुत समझदार थे। भले ही कोई भी चीज़ आए लेकिन उन्हें मूर्छा उत्पन्न नहीं करवा सकती थी क्योंकि उस चीज़ को वीतराग तीनों काल से देख सकते थे। त्रिकाल ज्ञान से उत्पन्न, व्यय आदि को संपूर्ण रूप से जानते थे इसलिए उन्हें राग उत्पन्न नहीं होता था।

पुद्गल का खिंचाव डाले विषय अंधकार में

आत्मा तो दिया है और वह आत्मा असंग स्वभाव का है, निर्लेप स्वभाव का है लेकिन अनंत जन्मों से *पुद्गल* का खिंचाव है। आप अलग हुए, लेकिन *पुद्गल* का खिंचाव छोड़ता नहीं है न! वह खिंचाव जाता नहीं है न! स्त्री-पुरुष के आकर्षण में वह जागृति नहीं रखी तो *पुद्गल* का खिंचाव उसे अंधेरे में डाल देगा। इसलिए मूर्छा ही निकालनी है। मूर्छा चली जाए तो फिर हर्ज नहीं। 'मेरी मूर्छा चली गई' ऐसा कहने से कुछ

नहीं होगा, मूर्छा तो एक्ज़ेक्ट रूप से जानी ही चाहिए। और वह भी ज्ञानी पुरुष से टेस्ट करवा लेना चाहिए कि 'साहब, मेरी मूर्छा गई या नहीं, वह टेस्ट करके दीजिए।' वर्ना अंदर तो ऐसी ऐसी वकालत चलती है कि, 'बस, अब सारी मूर्छा चली गई है, अब कोई हर्ज नहीं है!' यानी वकालत करने वाले बहुत हैं न! इसलिए जाग्रत रहना! जहाँ अपराध होने की संभावना हो, ऐसी जगह पर से खिसक जाना।

जागृति मंद हुई कि विषय घुस जाता है। जागृति मंद हुई कि आवरण आ जाता है उसे। उस शक्ति को संभालने वाली जो शक्ति है न, उस शक्ति पर आवरण आ जाता है, उसका काम करना मंद हो जाता है। फिर उस समय जागृति मंद हो जाती है। उस शक्ति के मंद होने के बाद फिर कुछ नहीं हो सकता, कुछ नहीं बदलता।

जागृति में झपकी, वहाँ विषय की मार

विषय एक ऐसी खराब चीज़ है कि उसमें एक बार फिसल जाए तो फिर जागृति पर गाढ़ आवरण आ जाता है। उसके बाद अगर जागृति रखनी हो, फिर भी नहीं रह पाती। जब तक एक बार भी गिरा नहीं है, तब तक जागृति रहती है। शायद आवरण आ जाए, लेकिन जागृति तुरंत ही आ जाती है। लेकिन एक ही बार फिसला तो ज़बरदस्त गाढ़ आवरण आ जाता है, फिर सूर्य-चंद्र नहीं दिखते। एक ही बार फिसले तो भी बहुत नुकसान है। संसार के विषय सुखों की स्पृहा जितनी ज़्यादा, उतना (आध्यात्मिक) 'डेवेलपमेन्ट' कम। इस संसारचक्र का आधार विषय पर है। हैं तो पाँच ही विषय, लेकिन स्त्री से संबंधित विषय तो बहुत ही भारी है। उसके तो बाद में भारी स्पंदन उड़ते हैं। अपना ज्ञान इतना अच्छा है कि उसमें रहे तो उसे कुछ भी स्पर्श नहीं करेगा और पिछला सब धुल जाएगा। लेकिन विषय के बारे में जाग्रत रहना पड़ेगा। वहाँ तो 'इसमें सुख है ही नहीं और यह फँसाव ही है' ऐसा अभिप्राय रहना चाहिए। ऐसा भान रहेगा तो छूटा जा सकेगा।

ज्ञानी संज्ञा से छूटे विषय

लोगों ने विषय में सुख माना है, उसी प्रकार खुद ने भी इसमें सुख मान लिया है। इसमें बिल्कुल भी सुख मानने जैसा नहीं है। इसे तो सुख कह ही नहीं सकते। यदि कोई शराबी आदमी ऐसा कहे कि 'मैं पूरे हिन्दुस्तान का राजा हूँ', तो हम नहीं समझ जाएँगे कि यह तो दारू के नशे में बोल रहा है? उसी प्रकार इस भ्रांति की वजह से उसे इसमें सुख महसूस होता है। विषय में कहीं सुख होता होगा? सुख तो भीतर है, लेकिन यह तो बाहर दूसरों में आरोपण करते हैं इसलिए वहाँ पर सुख महसूस होता है। भ्रांतिरस से यह सब खड़ा हो गया है। भ्रांतिरस यानी क्या कि कुत्ता जिस तरह हड्डी चूसता है, वह आपने देखा है? हड्डी पर जो थोड़ा-बहुत माँस लगा हुआ हो वह तो मानो मिल गया, लेकिन उसके बाद भी क्यों चूस रहा है? फिर खूब दबाए न, वह हड्डी तो यों लोहे की तरह मज़बूत होती है। तब क्या होता है, कि उसके मसूड़े दबते हैं और फिर उनमें से खून निकलता है। कुत्ता समझता है वह खून हड्डी में से निकल रहा है, इसलिए फिर खूब चबा-चबाकर हड्डी चूसता है। अरे! तू तेरा ही खून चूस रहा है। इसी तरह यह संसार भी चल रहा है। इसी तरह ये लोग भी हड्डियाँ ही चूस रहे हैं और खुद का ही खून चख रहे हैं।

अत: अब कुछ निबेड़ा लाओ। अनादि से मार खाते आए हो और उसमें भला ऐसा कौन

सा सुख है? सात्विक रूप से पता नहीं लगाना चाहिए कि इसमें कोई सुख नहीं दिखता! बल्कि मूर्खता हो जाती है, फूलिशनेस हो जाती है। विषय से दूर रहा तो भगवान बनकर खड़ा रहेगा और विषय में यदि लटका तो अधोगति में नर्क में जाने पर भी अंत नहीं आएगा, ऐसा हमने ज्ञान से देखा है। अब आपको विश्वास हो गया न? आज आपको यह गलत हुआ है, ऐसा ज्ञान हो गया न? यह कोई ऐसा-वैसा ज्ञान नहीं है। 'यह गलत है' ऐसा ज्ञान हुआ, उसी को हम 'ज्ञान' कहते हैं। वापस पलटने लगा तो काम ही निकाल लेगा। यह तो, कोई दीया धरने वाला (मार्ग दिखाने वाला) होना चाहिए, कोई दीया धरने वाला नहीं हो तो क्या होगा?

ज्ञानी की संज्ञा से देखें तो इसमें निरा दुःख है। विषय में इतना अधिक ज़ोखिम है। दुनिया में किसी और चीज़ में दोष नहीं होगा, उतना दोष अब्रह्मचर्य में है। ये तो आंतरिक दुःख के कारण अब्रह्मचर्य करते हैं। जिसे आंतरिक सुख है, वह अब्रह्मचर्य करता ही नहीं। आपको शुद्धात्मा में ही सुख है, ऐसा यथार्थ रूप से समझ में आ जाएगा, तब विषय में सुख नहीं रहेगा।

2. दारू का पेय

चिंता मिटाने में क्या हेल्प करती है दारू?

कभी भी चिंता-विंता होती है तुझे?

प्रश्नकर्ता : कई बार।

दादाश्री : उस समय कौन सी दवाई लगाता है?

प्रश्नकर्ता : नहीं बोल सकता ऐसा।

दादाश्री : ऐसा? दवाई नहीं बोल सकता, नहीं? होगी कोई... गुप्त दवाईयाँ! सिक्रेट दवाईयाँ, वह सही दवाई नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मम्मी भी ऐसा कहती है, बट इट वर्कस (लेकिन वह काम करती है)।

दादाश्री : लेकिन हेल्प करती है?

प्रश्नकर्ता : फॉर द मोमेन्ट, थोड़ी देर के लिए ही।

दादाश्री : फिर वह दवाई, उसका क्या इफेक्ट होता होगा?

प्रश्नकर्ता : इस तरह थोड़ी देर के लिए सब भूल जाते हैं, लेकिन बाद में वह तो होता ही है।

दादाश्री : लेकिन वह प्रत्याघाती इफेक्ट क्या देता है बाद में?

प्रश्नकर्ता : सिर दर्द करता है।

दादाश्री : नहीं, लेकिन यह सिर दर्द करता है, वह प्रत्याघाती इफेक्ट नहीं है, बेभान हो जाएगा। यह जो थोड़ा बहुत भान है वह भी चला जाएगा! लेकिन यह किसलिए ऐसी मूर्छा करनी पड़ती है? कुछ लोगों का तो ऑपरेशन करना पड़ता है न, कुछ की यों अंगुली काट डालनी हो, तो उसे वेदना न हो इसके लिए ये डॉक्टर कुछ दवाई लगाते हैं। उससे वह सुन्न कर देते हैं। तू किसलिए सुन्न कर देता है? तुझे दुःख नहीं है। दुःख वालों को सुन्न करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : चिंता कम हो उसके लिए।

दादाश्री : चिंता कम होती है? चिंता का उपाय और कुछ करना चाहिए, ऐसा उपाय नहीं करना चाहिए। यह दारू वह उसका उपाय नहीं है। क्या हेल्प करती है दारू? यह तो एक प्रकार

की साइकोलॉजिकल इफेक्ट (मानसिक असर) है। वह भी एक तरह की मूर्छा ही है। ये लोग पीकर यों मस्ती में घूमते हैं। यह मस्ती किस काम की है? इस मस्ती के बजाय वरीज़ (चिंता) अच्छी!

भान भुलाए वह चीज़ कैसे छू सकते हैं?

मूर्छा होती है थोड़ी बहुत?

प्रश्नकर्ता : हाँ, होती है।

दादाश्री : तो फिर वह कैसे पुसाएगा? एक तो मूर्छा है ही आपको। ज्ञान नहीं है यानी मूर्छा है ही और ऊपर से मूर्छित हो जाते हैं। इससे मूर्छा होती है, यानी जागृति भी खत्म हो जाती है। ऐसा नहीं लगता, वह मूर्छित करती है ऐसा? आपकी जागृति थोड़ी होती है, वह भी लूट लेती है, नहीं? यह पीने के बाद थोड़ा सयाना होता है क्या? दारू ज़्यादा पी ले तो क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : तो लुढ़कता रहता है। हाँ, भान चला जाता है सारा।

दादाश्री : मूर्छित हो जाता है और लोग पैसे भी छीन लेते हैं और पुलिस के हवाले करते हैं और जेल में भी डाल देते हैं। यह करने जैसी चीज़ नहीं है। आत्मा मूर्छित हो जाए, वह काम करने जैसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : आत्मा थोड़े ही बेभान होता है? वह तो जाग्रत ही होता है न?

दादाश्री : मूल आत्मा तो निरंतर जाग्रत ही है लेकिन यह व्यवहार आत्मा है न, उसे तो डलनेस (सुस्ती) नहीं आनी चाहिए। ऐसे कारण नहीं होने चाहिए। मूर्छा लाए न, ऐसी चीज़ मनुष्यों को छूनी नहीं चाहिए। जो अपना भान भुला दे, ऐसी चीज़ें नहीं करनी चाहिए क्योंकि यों तो मनुष्य मूर्छित ही है। वैसे तो मोह वाला है, मूर्छा ही है।

दारू का आवरण से खो देते हैं डेवेलपमेन्ट

प्रश्नकर्ता : दारू का असर आत्मा पर से नहीं जाता?

दादाश्री : कैसे जा सकता है यह? फिर भी आदत पड़ गई हो तो मैं रास्ता निकाल देता हूँ, पर क्या कर सकता हूँ? लेकिन दारू यानी दिमाग में फिर असर हो जाता है, दिमाग में बदलाव होते हैं। यानी उसके बाद आत्मा पर भ्रांति के आवरण आ जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : यह पीने से दिमाग को नुकसान कैसे होता है?

दादाश्री : यह भान भुला देता है न, उस समय अंदर जागृति पर आवरण आ जाता है और फिर हमेशा के लिए वह आवरण जाता नहीं है। आपको मन में ऐसा लगेगा कि चला गया, लेकिन नहीं जाता वह। ऐसा होते-होते, सारे आवरण आते आते आते, फिर मनुष्य जड़ जैसा हो जाता है। फिर उसे अच्छे विचार वगैरह कुछ भी नहीं आते। दारू के व्यसन से डेवेलपमेन्ट कमज़ोर पड़ जाता है, समझ शक्ति कम हो जाती है। उससे भीतर आवरण उत्पन्न होते हैं। ब्रांडी पीने के बाद आवरण वाले हो जाते हैं न, फिर खत्म हो जाते हैं। नये आवरण आ जाते हैं उस पर, बहुत सारे आवरण हो जाते हैं। अधोगति में ले जाते हैं ये सब। यानी जो डेवेलप हुए हैं, उनका इस दारू में से बाहर निकलने के बाद ब्रेइन बहुत अच्छा डेवेलप हो चुका होता है। उन्हें फिर से नहीं बिगाड़ना चाहिए।

इन्टॉक्सिकेटेड ड्रिंक्स मृतवत् करे

प्रश्नकर्ता : दारू से मानों दु:खों के सामने शक्ति मिलती है, ऐसा लगता है!

दादाश्री : दारू, मैं आपसे कह देता हूँ, ये जो इन्टॉक्सिकेटेड ड्रिंक्स (नशीले पेय) हैं न सब, ये क्या हैं? आपकी जो शक्तियाँ अंदर पड़ी हुई हैं, आगे की ज़िंदगी में ज़रूरत की शक्तियाँ जो अंदर पड़ी हुई हैं, वह ही उसे उठाकर बाहर लाती हैं। क्या करती हैं? भीतर जो शक्ति थी, उसे रोज़ इस्तेमाल करनी थी, उसे एक ही दिन में व्यर्थ कर दे तब फिर उसे दस दिन तक ढीला कर देती है, खत्म कर देती है। हर रोज़ इस्तेमाल करने की शक्ति होती है न, उसे व्यसन में एक दिन में पूरा कर देता है। उस दिन उल्लास में आ जाता है, लेकिन बाद में यूज़लेस हो जाता है व्यक्ति। दारू का नशा, उसे उत्तेजना कहते हैं। बाद में उतर जाता है और डिप्रेशन देता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, दारू का असर उतर जाता है फिर दु:ख के पहाड़ टूट पड़ते हैं।

दादाश्री : हाँ, उस समय बिल्कुल मृतपाय हो जाता है। यह शक्ति कोई दारू नहीं देता, यह आनंद दारू नहीं देता। आपके पिछले आनंद का जो क्वॉटा है, उसमें से ही बाहर निकालता है, इन्टॉक्सिकेट करता है। वह ब्रांडी हो या सिगरेट हो, तम्बाकू या हशीश (गांजा, भांग), अन्य कुछ भी हो।

यानी बात तो समझनी पड़ेगी न! यह इन्टॉक्सिकेटेड क्या है? खुद के भीतर जो है वह बाहर लाता है। नयी चीज़ नहीं निकालता वह।

जागृति में से निद्रा में जाने का उल्टा रास्ता

मूर्छा कैसे पुसाए? मनुष्य मूर्छित हो जाए तो किस काम का? यों तो ये शास्त्रकार इन लोगों से क्या कहते हैं, कि खुली आँखों से सो रहा है पूरा जगत्! तब कहते हैं, उसका क्या कारण? किसलिए सो रहे हैं? तब कहते हैं, घर और व्यापार दो ही जगह पर जागृति है उनकी। अन्य किसी जगह उसकी जागृति नहीं है। व्यापार में, घर में बहुत जागृति रखते हैं, लेकिन परलोक में मेरा क्या होगा उसकी जागृति नहीं होती इसलिए इस तरह सोते हैं, ऊपर से दारू पीते हैं तब ज़्यादा सोते हैं वे। यह पीया यानी दूसरी बार सो गए फिर, डबलिंग (दोगुना) किया। यह रोग तो नहीं गया और दूसरा रोग उत्पन्न कर दिया। जो अपना भान भूला दे, उस चीज़ को कैसे छू सकते हैं? छूना ही नहीं चाहिए न! इसलिए जागृति बढ़ाने की ज़रूरत है और जागृति बढ़ाने के लिए सिर्फ दारू बंध रखने की ज़रूरत है।

निद्रा में से जाग्रत होने का रास्ता जगत् में किसी के पास नहीं है। जागृति में से निद्रा में आने का रास्ता है। दारू पीते हैं तो निद्रा में आ जाते हैं। उससे नशा होता है तुरंत। वह नशा यानी आत्मा को जो जागृति है वह सभी मंद कर देती है।

प्रश्नकर्ता : वह आत्मा को गैरहाज़िर करती है।

दादाश्री : हाँ, उसका जानपना खो देती है।

ज्ञानी की विनती, 'नहीं छूना दारू को'

दारू तो पीनी ही नहीं चाहिए आपको। अन्य लोगों को पुसाए वे करें। आपको नहीं छूना चाहिए। यह दारू पीने से आप ही फँस जाते हैं बाद में। ऐसा हो सकता है, फँस जाते हैं ऐसे?

प्रश्नकर्ता : बिल्कुल।

दादाश्री : तो फिर ऐसे व्यापार में कौन घुसता है? यह फँसाव वाली चीज़ में कौन घुसेगा? और उस दारू के पंज़े में फँसने के बाद आप निकल नहीं पाओगे। जितने फँस गए हैं, वे सभी मुझसे मिले थे, वे निकल नहीं पाते और बहुत ही लाचारी करते हैं फिर भी कुछ नहीं होता। फँसने के बाद छूट नहीं पाएँगे और मैंने देखा है, बाद में लोग बहुत दुःखी हुए हैं। फिर छूट नहीं पाते, तो बहुत दुःखी होते हैं बेचारे। इसलिए हम तो आपको लाल झंडी दिखाते हैं। अभी भी जब तक आदत नहीं पड़ी हो, तब तक उससे मुक्ति ले लेना। और आदत हो गई, यानी उसके परवश हो गया।

मैं तो आपसे विनती करके कहता हूँ कि भाई, यह मत घुसने देना, वर्ना फिर फँसने के बाद आप निकल नहीं पाओगे। यानी हमारी आज्ञा का पालन न करो तो हमारी इतनी विनती ही स्वीकार लेना।

मनुष्य में मूर्छित होते ही जानवर का जन्म

अब, लोग किसलिए पीते होंगे? तब कहते हैं, देखा देखी से पीते हैं और दूसरा, वह कोई बाहर का दुःख हो न, वह दुःख असर न करे इसलिए मूर्छित कर देते हैं। अब, ऐसे मूर्छित हो जाए, मनुष्य में मूर्छित हो गए इसलिए मनुष्य जन्म फिर से नहीं मिलता, अधोगति में जाते हैं। यानी जानवर में जाते हैं फिर। मूर्छा जानवर में होती है न, ज़्यादा? अर्थात् मनुष्य में तो भान जैसे-जैसे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे ऊर्ध्वगति होती है।

प्रश्नकर्ता : अभी जो हमें भौतिक सुख, भौतिक आनंद मिल रहें हैं उन्हें छोड़ना है और अगले जन्म के लिए करना है, तो अभी ये छोड़कर वैसा करने की क्या ज़रूरत है? अभी प्राप्त कर लो आनंद!

दादाश्री : अभी जो आनंद प्राप्त करते हो न, उससे पाशवाता आएगी। सज्जनता चली जाएगी और पाशव दशा आएगी। उस ज़िम्मेदारी का भान नहीं होने से ही ऐसा चलता रहता है न!

दारू और माँसाहार से ये जो कर्ज़ होता है, दारू और माँसाहार में जो सुख भोगते हैं, यह सुख रिपे (लौटाते) करते समय जानवर में जाना पड़ता है। ये जिनते सुख हैं न, जितने सुख आप ले रहे हो, उन्हें रिपे करना पड़ेगा, ऐसी ज़िम्मेदारी आपको समझ में आ जानी चाहिए। यह जगत् पोलम्पोल (गड़बड़-घोटाला) नहीं है। यह रिपे वाला जगत् है। सिर्फ आंतरिक सुख का ही रिपे नहीं करना पड़ता। बाकी सारे बाहर के सुख, वे सारे रिपे करने हैं।

जागृति कम होने से, हो जाए जड़ जैसा

प्रश्नकर्ता : अगले जनम में जानवर होकर रिपे करना पड़ेगा वह ठीक है, लेकिन इस जन्म में क्या होगा उसका? इस जन्म के क्या परिणाम हैं?

दादाश्री : इस जन्म में, उसे खुद को आवरण आ जाते हैं यानी जड़ जैसा, जानवर जैसा ही हो गया होता है। मनुष्य जानवर जैसा हो जाता है फिर। जानवर में और उसमें फर्क ही नहीं क्योंकि उसकी जागृति सारी खत्म हो जाती है। जैसे जागृति बढ़ती है वैसे मनुष्य उत्तम होता है। मनुष्य को जागृति बढ़ानी है उसके बजाय जागृति खत्म हो जाएगी। यानी फिर जानवर हो जाएगा। जानवर होने का साधन है यह।

दारू तो मनुष्य को जानवर बनाता है। लोग, ये मनुष्य 'मनुष्य' कहते हैं, लेकिन भगवान आएँगे तो 'मनुष्य' नहीं कहेंगे आपको। यहाँ पर सिर्फ मनुष्य का फोटो पड़ता है। लोगों में प्रेस्टिज

(इज्जत) नहीं रहती, लोगों में मान नहीं रहता, कुछ भी नहीं रहता। ऐसे भी, पुलिस वाला पकड़कर ले जाता है, उस समय इज्जत बढ़ जाती है न?

ज्ञानी को भी अज्ञानी कर दे

दारू, माँसाहार को कभी भी मत छूना। इसे साइन्टिफिक (वैज्ञानिक) तौर पर देखें तो नुकसान बहुत ही भयंकर है। छूना नहीं चाहिए उसे।

प्रश्नकर्ता : यह साइन्टिफिक है या यों ही, ऐसे हमें...

दादाश्री : साइन्टिफिक है, यह यों ही गप्प नहीं है। एक शब्द भी हम गप्प नहीं बोलते, सारी साइन्टिफिक बात बोलते हैं। बहुत ही साइन्टिफिक है। वेरी इन्जुरीअस (बहुत ही हानिकारक)!

प्रश्नकर्ता : यह कैसे साइन्टिफिक है?

दादाश्री : वापस इसका तरीका ढूँढते हो? यों तो चार पैर आने की तैयारी हो रही है और वापस तरीका ढूँढते हो?

प्रश्नकर्ता : यह समझाइए तो थोड़ा अधिक समझ में आए।

दादाश्री : और कितना समझाएँ? असार है। एक तो निरे कितने जीव मर जाते हैं इससे, दूसरा, खुद को मूर्छा आती है।

दारू तो चलते-फिरते त्रस जीवों का भरपूर रस है! निरा जीवों का ही रस है! दारू के एक परमाणु में इतने अधिक जंतु हैं कि ज्ञानी को भी वह अज्ञानी कर दे। इसमें बहुत अधिक जंतु होते हैं। वह (दारू) धर्म को बरबाद कर देती है।

वाइन में कितने जीव मर जाते हैं, तब वाइन तैयार होती है, वह जानते हो? दारू-वाइन बनाते समय बहुत जीवजंतु मर जाते हैं। बनाते समय फर्मेन्टेशन में जो जीव उत्पन्न होते हैं न, बहुत मर जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो दही बनाने में भी जीवजंतु होते हैं।

दादाश्री : हाँ, इस दही में भी निरे जीव ही हैं सभी। सभी जीव ही हैं इस जगत् में। लेकिन यह जो दही है वह हमें इन्टॉक्सिकेशन नहीं करता जबकि उसमें तो फिर आपको हमेशा उसके बंधन में आ जाना पड़ता है। वह तो इन्टॉक्सिकेशन करता है मनुष्य को। उससे भान खो देते हैं, सार-असार का विवेक खो देते हैं। मैं आपसे वह पीने को मना करता हूँ क्योंकि वह तो नासमझ लोगों का काम है। समझ वालों को व्यसन नहीं होता। इससे अलग रहने जैसा है, यदि सुखी होना है तो।

अध्यात्म मार्ग पर जाने वाले के लफड़े नहीं होते

प्रश्नकर्ता : अभी दारू का इतना अधिक उपयोग हो रहा है, इसलिए पाप की थियरी में से निकल गया हो, ऐसा लगता है। तो इस लाइन को कहाँ ड्रो करनी (खींचनी) है हमें, कि यह पाप है और यह पुण्य है?

दादाश्री : ऐसा है न, यदि दारू आपका कुछ नुकसान नहीं करता है, आपके ब्रेइन पर असर नहीं करता है, शरीर को अन्य कुछ नुकसान नहीं करता है तो दारू पीने से कितना पाप है इसमें? तब कहते हैं, इसमें जीव हिंसा होती है इतना ही, बहुत ज़्यादा पाप नहीं हैं। परंतु इससे आप पर असर होता है इसलिए बंद करवा दिया है। आपको पागल बनाता है, इसलिए बंद करने जैसा है।

प्रश्नकर्ता : हर एक चीज़ से नुकसान तो है ही, लेकिन कम-ज़्यादा है।

दादाश्री : हर एक में नुकसान भी होता है और फिर फायदा भी होता है। हमेशा सिर्फ नुकसान नहीं होता हर एक चीज़ में लेकिन इसमें तो आध्यात्मिक नुकसान है, इसलिए हम मना करते हैं। भौतिक में तो फायदा हो रहा हो, फिर भी हमें ज़रूरत नहीं है, अध्यात्म के रास्ते पर हमें चलना चाहिए। हम इन्डियन्स हैं, इसलिए अपना अध्यात्म मार्ग होना चाहिए और शांतिमय मार्ग होना चाहिए। अशांति हम सहन नहीं कर सकते और इस अध्यात्म मार्ग पर चलने वाले को ऐसे लफड़े होते ही नहीं।

एक यह माँसाहार और दारू, दोनों बंद हों न, तो बहुत हो गया। ये भगवान के नियम के बाहर की चीज़ें हैं।

खुद निश्चय करें तो छूट सकते हैं

प्रश्नकर्ता : कई लोग इस दारू की लत में पड़े हैं, वे लोग ऐसा कहते हैं कि, 'हम छोड़ना चाहते हैं फिर भी हमसे नहीं छूटती'।

दादाश्री : बहुत काल (समय) हो जाता है न, उसके बाद नहीं छूटती यह। फिर भी जिसे छोड़ना है न, उसका निश्चय अभी भी किसी न किसी दिन काम करता है। खुद निश्चय करे तो हो सकता है, बाकी छूट नहीं सकते। अब अन्य मार्ग नहीं रहा।

अब, यह गाड़ी चलानी है, इसमें यह स्टीयरिंग यानी निश्चय। यह स्टीयरिंग वह भी निश्चय है एक तरह का। रोड़ से बाहर नहीं निकलनी चाहिए, ऐसा निश्चय। उसके बावजूद रोड़ से निकल जाए वह डिफरन्ट मेटर (अलग बात) है। संयोगों के कारण स्लिप हो जाती है या दूसरा-तीसरा, या तो हाथ पर कुछ हुआ हो और यह हट गई हो, लेकिन अपना निश्चय डगमगाना नहीं चाहिए।

और जिसका निश्चय नहीं रह पाता है न, उसे तो प्रतिज्ञा का पालन करना पड़ता है, प्रतिज्ञा लेनी पड़ती है। अब, प्रतिज्ञा हमारे पास से लें तो काम की।

व्यसन की निंदा करने से मूल ग्रंथि खत्म

अब यह चीज़ कैसे जाएगी? तब कहते हैं, एक व्यक्ति दारू पी रहा है तो उस पर बहुत चिढ़ रखते हैं, 'यह दारू नहीं पीना चाहिए, नहीं पीना चाहिए, यह दारू पीकर देखो न, इसकी यह दशा हुई है।' ऐसा करते-करते खुद फिर नहीं पी सकेगा। खुद की मूल ग्रंथि खत्म हो जाती है। मेरी यह बात समझ में आए, ऐसी है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : क्या? (व्यसन के लिए) 'दारू पीना खराब है' ऐसा तुझे हमेशा बोलना है।

प्रश्नकर्ता : यदि कोई पी रहा है तो 'यह खराब है', ऐसा कहने से अपना छूट जाता है।

दादाश्री : खुद की गाँठ टूट जाती है, ऐसा करते-करते।

हार्टिली पश्चाताप सहित सुधारने वाला चाहिए

प्रश्नकर्ता : मान लो कि बीड़ी पीना वह खराब है, माँसाहारी होना वह खराब है, ये सभी लोग मानते हैं कि खराब है, इसके बावजूद भी लोग ये करते ही रहते हैं, इन कर्मों को जानने के बावजूद भी करते जाते हैं।

दादाश्री : ये सभी बोलते हैं, वे ऊपर-ऊपर से बोलते हैं, सुपरफ्लुअस (दिखावटी) बोलते

हैं। कैसा? हार्टिली नहीं बोलते। यदि हार्टिली बोलें, तब तो कुछ टाइम में इसे गए बगैर चारा ही नहीं है। हार्टिली है तो इसे जाना ही पड़ेगा। आपके जो दोष हों, बहुत ही खराब दोष हों, लेकिन आप बहुत पश्चाताप करें, फिर भी हो जाते हैं दूसरे दिन। तो हो जाएँ उसमें हर्ज़ नहीं है, लेकिन बहुत पश्चाताप करते रहो।

प्रश्नकर्ता : हाँ, यानी व्यक्ति सुधर सके ऐसी संभावना है?

दादाश्री : बहुत संभावना है, लेकिन सुधारने वाला होना चाहिए। ये डॉक्टर एम.डी.-वेम.डी. नहीं चलते वहाँ पर। घोटाले वाला नहीं चलता। यानी सुधारने वाला होना चाहिए। इसलिए वह कहता है, कि मैंने इसका इतना पश्चाताप किया, इतना सब कुछ किया, फिर भी दोष नहीं गया। नहीं, दोष अवश्य जाता है, लेकिन इस प्याज़ की जैसी परतें होती हैं न, वह एक परत जाती है, इससे क्या दूसरी परत चली गई?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : इसलिए परतें कम होती ही जाती हैं, लेकिन यदि हार्टिली करें तो। ये लोग सुपरफ्लुअस बोलते हैं। सिर्फ लोगों को दिखाने के लिए ही बोलते हैं।

अक्रम में फिसलने के तीन स्थानक

ज्ञान मिलने के बाद संसार में फिसलने की तीन ही चीज़ें हैं। बाकी सब खाना-पीना, कपड़े पहनना, चश्मा लगाना, सिनेमा देखने जाना, लेकिन सिर्फ माँसाहार नहीं कर सकते। दूसरा, ब्रान्डी (दारू) की बूँद भी नहीं छू सकते और तीसरा, पराई स्त्री नहीं। पराई स्त्री का विचार आए तो प्रतिक्रमण करना। ये तीन ही चीज़ें गिरने के स्थानक हैं। अन्य कोई चीज़ नहीं गिराएगी। गिरना अर्थात् फिर उठ नहीं पाएगा। इसलिए हम कहते हैं कि हमारे पास मत आना और अगर आओगे तो गिरने के बाद में हड्डी भी नहीं मिलेगी। इसमें तो बहुत उच्च-हाई लेवल पर पहुँच जाते हैं। इसके बजाय यदि ज़रा सा ऊँचे जाकर गिर जाओ तो हड्डियाँ कम टूटेंगी। अन्य कोई भी गिरने के भयस्थानक नहीं हैं। बाकी तो, काम-धंधा करना, सब करना, चाय पीना, उसमें हर्ज नहीं है। चाय तो इन्टोक्सिकेशन है, लेकिन फिर भी यदि पीओगे तो हर्ज नहीं है। उससे नशा नहीं होता न! दारू पीने से तो (व्यवहार) आत्मा का ही होश नहीं रहता। फिर पूरा ज्ञान खत्म हो जाता है। उसके बाद नर्कगति मिलती है उसे और पर-स्त्री में भी ऐसा ही है। पर-स्त्री संबंध में निबेड़ा ही नहीं आएगा। ये माँसाहार के संबंध में भी निबेड़ा नहीं आ सकता है, दारू के बारे में भी निबेड़ा नहीं आएगा, यह नोट करके रखना।

3. कैफ का दारू - अहंकार का कैफ, 'मैं-मैं' करना वह

अहंकार ने रोका आत्म उजास

इस जगत् के मनुष्य दो चीज़ों के आधार पर जीते हैं : एक है स्वरूप का आधार और दूसरा, अहंकार का आधार। अहंकार से ही तो तेरा जीवन है। किसी का अहंकार सयाना होता है। किसी का अहंकार पगला होता है! वे अहंकार के 'बेज़मेन्ट' (आधार) पर पड़े रहते हैं।

प्रश्नकर्ता : हमारी सभी शक्तियों के आवृत होने का मुख्य कारण अहंकार ही है?

दादाश्री : अहंकार की वजह से ही सारी शक्तियाँ व्यर्थ हो गई हैं न! अहंकार हमेशा अंधा ही होता है। अहंकार क्या मनवाता है, कि 'मैं

सब कुछ समझता हूँ और मैं जानता हूँ', बस। इतना मनवाने से फिर जानने की बात रह जाती है। यह सारा मार्ग अज्ञानता का है। जब भी कोई अड़चन आती है वह नासमझी की वजह से आती है, समझ में नहीं आने के कारण आती है। समझ से अड़चन चली जाती है। अब, समझ तो है नहीं और अहंकार का स्वभाव ऐसा है कि जैसे-जैसे बड़ा होता जाता है वैसे-वैसे सभी से कहता है कि 'मैं तो जानता हूँ, मैं सब कुछ जानता हूँ।'

'मैं कुछ हूँ', वह सबसे बड़ा रोग

कोई गालियाँ दे तो कुछ होता है आपको?

प्रश्नकर्ता : अहंकार आहत हो जाए तो होगा तो सही न!

दादाश्री : अहंकार आहत हो जाता है? अहंकार आहत हो जाए तो अच्छा, उतना कम हो जाएगा। आहत होते-होते खत्म हो जाएगा न? अहंकार को ताज़ा रखना है आपको? फ्रेश? आपको अहंकार की बहुत ज़रूरत है?

प्रश्नकर्ता : वह तो अपने साथ रहता ही है न?

दादाश्री : हाँ, साथ में ही रहता है। वह निकलता ही नहीं है न! उसी की वजह से है यह सब कुछ है। यह अहंकार तो क्रोनिक रोग कहलाता है। वह हमारे पास रहेगा तो निकलेगा, वर्ना लोग तो बल्कि बढ़ा देंगे वह रोग!

कोई कहेगा कि, 'इन चंदूभाई में अक़्ल नहीं है', तो आप पर कुछ असर होगा?

प्रश्नकर्ता : होगा तो सही न!

दादाश्री : क्यों? क्या अक़्ल के बोरे हो आप?

प्रश्नकर्ता : नहीं हूँ इसीलिए होगा।

दादाश्री : और कोई कहे कि ये चंदूभाई कहाँ के कलेक्टर हैं? तब आप ऐसा कहोगे कि 'मैं कलेक्टर हूँ?'

प्रश्नकर्ता : कलेक्टर नहीं हूँ तो कैसे कहूँगा?

दादाश्री : तो इसमें असर नहीं होता कलेक्टर में और इसमें असर क्यों हो जाता है? आप अंदर मान बैठे हो कि 'मैं कुछ हूँ, अक़्ल वाला हूँ'।

प्रश्नकर्ता : उसमें अहंकार आहत होता है।

दादाश्री : अहंकार अंदर आहत हो जाता है न, मैं कुछ तो अक़्ल वाला हूँ। अक़्ल का बोरा बाज़ार में बेचने जाए तो चार आने भी नहीं मिलेंगे, कोई लेगा ही नहीं। क्योंकि सभी अक़्ल के बोरे हैं, कौन लेगा? आपको कोई कुछ कह गया हो तो तुरंत होता है कि 'मैं कुछ हूँ। मैं तो पहले से ही अक़्ल वाला हूँ', ऐसा मानते हो। क्या कहते हो? आपका ऐसा मानना है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, सही है। पहले से ही अपना ऐसा मानना है कि 'मैं अक़्ल वाला हूँ, ऐसा सब कुछ हूँ। मुझे कोई क्या कह सकता है?

दादाश्री : ऐसा तो कभी-कभी ही होता है न?

प्रश्नकर्ता : दादा का यह ज्ञान नहीं लिया था तब ऐसा था कि मुझे कोई क्या कह सकता है!' अहंकार ऐसा था लेकिन अब सब एडजस्ट कर लेता हूँ।

दादाश्री : 'मैं होशियार हूँ', ऐसा रहता है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, रहता है।

दादाश्री : वह रोग सब से बड़ा है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अब बिल्कुल नहीं रहता।

दादाश्री : ऐसा नहीं, कभी ऐसा रहता है क्या?

प्रश्नकर्ता : 'मैं होशियार हूँ', ऐसा तो नहीं रहता कभी, लेकिन मुझे कोई कुछ न कह दें, बस उसके लिए सावधान रहता हूँ।

दादाश्री : किसी के दबाव में नहीं आऊँगा, ऐसा कुछ था न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा तो था।

दादाश्री : 'मैं कुछ हूँ', वह जो था न, वही रोग है और उसी रोग के कारण टकराव होता है। ज्ञान मिलने के बाद भी यह रोग नहीं जाता है इसलिए यह रोग अभी भी रहा हो तो निकाल देना! बाकी, यह ज्ञान मिलने के बाद भी यह रोग रहा करता है। फिर हम 'उससे' कहते हैं न, तो समझने के बाद धीरे-धीरे यह रोग निकालता है। लेकिन यदि नहीं कहेंगे तो अंदर रह जाएगा न। वह रोग निकल जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : 'मैं कुछ हूँ', ऐसे रोग के लक्षण क्या हैं?

दादाश्री : उसके बहुत सारे लक्षण होते हैं, अज्ञानी जैसे ही लक्षण होते हैं सारे। खुद की इच्छानुसार करें, फलाना करें, मान दें तो मीठा लगता है। ऐसे कई रोग हैं, ऐसे बहुत से लक्षण हैं। मान दें और कड़वा नहीं लगे तो उसे यह ज्ञान नहीं रहेगा। कोई मान दे रहा हो न, तो ज्ञान वाला व्यक्ति तो उकता जाएगा कि यह मान किसे मिल रहा है? चंदूलाल को मान मिल रहा है। चंदूलाल का क्या करना है? इसलिए इस रोग से तो बहुत सतर्क रहने जैसा है।

जानपने का कैफ लाए अजागृति

यह मनुष्यपन, वह तो ऐश्वर्य कहलाता है! मनुष्यपन में तो 'खुद' परमेश्वर बनना है, परमात्मा बनना है! इसके बजाय ये लोग पाशवता और आर्तध्यान और रौद्रध्यान करते हैं! यहाँ तो मोक्ष का मार्ग ढूँढना है लेकिन उसके बजाय संसार रोग को बढ़ाया करते हैं और जानने का कैफ लेकर घूमते रहते हैं! 'मैं जानता हूँ' यही सब से बड़ा भूत है! 'यह मेरा है' यह सब से बड़ी बला है!

एक महाराज ने मुझसे पूछा, 'क्यों मुझे कुछ दिखाई नहीं देता है?' मैंने कहा, 'महाराज, कैफ चढ़ा हुआ है?' तब कहने लगे, ''उसका तो बहुत कैफ रहता है, 'मैं जानता हूँ' का।'' मैंने कहा, 'आत्मा को जान लिया हो तभी कहा जाएगा कि जान लिया, नहीं तो फिर जानने का और क्या था भला? अर्थात् यह जो नहीं जानना है, उसका कैफ आप रखते हो।' 'मैं जानता हूँ,' लेकिन जो जानना है वह तो आप जानते ही नहीं। ये तो बिना काम की परेशानी मोल ली है!

अगर आपने जो जाना है उससे आपको तृप्ति नहीं हुई, अब भी ठोकर लगती है या नहीं लगती? अभी भी ठोकरें लगती हैं न? ठोकरें लगती हैं, यानी अंधेरा ही है और अँधेरे को आप उजाला मानते हो, इतना ही है। हमें ठोकर नहीं लगती तो हम जानते हैं कि हम प्रकाश (उजाले) में ही हैं। यदि जानते हो तो वो उजाला कहलाता है। तो फिर उजाले में ठोकर नहीं लगनी चाहिए, जबकि तुम कहते हो कि मुझे ठोकर लगती है, तो फिर आपका जानपना बेकार है! और जानते हो तो यहाँ किसलिए आए? तुमने जान लिया है, तो दूधपाक खा कर पड़े रहो न! आराम से सोते रहो न! तब कहता है, 'नहीं, भीतर अकुलाहट

होती है।' तब मैंने कहा कि, 'जो जानना है वह जाना नहीं है। जो नहीं जानना है वह जाना है और जो जानना है, वह तो कभी भी नहीं जाना है।'

जाना उसे कहते हैं कि देहाध्यास चला जाए। यह तो, देहाध्यास गया नहीं है और 'मैं जानता हूँ' का 'कैफ' रहे, तो फिर क्या दशा होगी? खुद का जानना बाकी है तो भी कहता है, 'मैं जानता हूँ।' उससे तो जानने का कैफ आने से आवरण चढ़ता है और फिर नया जानने की जिज्ञासा टूट जाती है। 'मैं कुछ जानता हूँ', ऐसा ज़रा सा भी विचार आए, वह फिर अजागृति ला देता है।

प्रश्नकर्ता : तो 'मैं कुछ जानता ही नहीं हूँ' ऐसा मानना है?

दादाश्री : दूसरा कुछ जानने की ज़रूरत ही नहीं है न! जो जानने का था वह नहीं जाना। यह दूसरा सब कुछ जानने से तो लोग बुद्धू हो गए हैं। ज़्यादा जानने से लोग कैसे हो गए हैं वह जानते हो? बुद्धू! नहीं जानना, वह अच्छा नहीं है, किन्तु जानने में तो ज़्यादा जोख़िम है। इसके बजाय, 'मेरी समझ में नहीं आता और मैं कुछ भी नहीं जानता', यह सबसे अच्छा है।

'मैं जानता हूँ', उससे ज़्यादा दुःख होता है। जाना उसे कहा जाता है कि प्रकाश हो जाए। प्रकाश नहीं होना चाहिए? चाहे जितने भी शास्त्रों का अध्ययन करें किन्तु प्रकाश नहीं हुआ तो किस काम का? इसलिए हम आपको प्रकाश कर देते हैं।

कैफ उतारे, वह आत्मज्ञान

बड़े-बड़े पंडित, शास्त्र पढ़ने वाले शास्त्रज्ञ, बड़े-बड़े साधु महाराज, आचार्य सभी जो जानते हैं, वह प्राकृत ज्ञान है, वह आत्मज्ञान नहीं है, लेकिन प्राकृतिक ज्ञान है। यह सारा प्राकृतज्ञान क्या करता है? प्रकृति से प्रकृति को धोता है। प्रकृति से प्रकृति को धोने से वह हल्की होती जाती है। एक जन्म प्रकृति को हल्की करने में जाता है और यदि कोई कुसंग मिल जाए तो वह प्रकृति को मज़बूत कर देता है! इसलिए उसे भगवान ने 'गजस्नानवत्' कहा है। गजस्नानवत् यानी कि जैसे हाथी पानी में नहाता है और बाहर निकलकर धूल उड़ाता है शरीर पर, वैसी दशा है इन मनुष्यों की! आत्मज्ञान, वह तो दुर्लभ चीज़ है, अत्यंत दुर्लभ, दुर्लभ है! मोक्ष तो बस नाम लेते हैं उतना ही, बात करते हैं उतना ही, बाकी प्राप्ति होना, वह आसान नहीं है। सभी प्रकृति ज्ञान वाले मन में क्या कहते हैं, 'मैं सब जान गया!' 'अरे! वह तो प्रकृति ज्ञान जाना है तूने! आत्मज्ञान जानना है। कितने ही जन्मों से प्रकृति ज्ञान, वही का वही जानते रहे हैं और क्या किया है? करती है प्रकृति और कहेगा, 'मैंने किया।' प्रकृति उसे नचाती है, उठाती है और कहेगा, 'मैं उठा।' सुलाती भी प्रकृति है, सोना हो तो सो नहीं पाता और जब प्रकृति सुलाती है तो कहेगा, 'मैं सो गया!'

बाकी, हम गारन्टी से कहते हैं कि पूरा जगत् प्राकृत ज्ञान में है। कोई शास्त्र पढ़ रहा हो या महावीर के पैंतालीस आगम धारण कर रहा हो या चार वेद धारण कर रहा हो, तब भी हम उसे कहेंगे कि, तू अभी प्राकृत ज्ञान में है! आत्मज्ञान और प्राकृत ज्ञान में छाछ और दूध जितना डिफरेन्स है। छाछ और दूध दोनों सफेद दिखते हैं। प्राकृत ज्ञान कैफ चढ़ाता है जबकि आत्मज्ञान कैफ उतार देता है। जिस प्रकार का कैफ हो, उन सभी प्रकार का कैफ आत्मज्ञान उतार देता है। कैफ घटता जाए, वही आत्मज्ञान का लेवल है। जब कैफ चढ़ता है, तब उसे आत्म-अज्ञान कहते हैं!

शास्त्रज्ञान का बहुत ही कैफ चढ़ता है। जब तक आत्मज्ञान नहीं होता तब तक ज्ञान का कैफ चढ़ता है। इसलिए खुद को आत्मज्ञान नहीं है, ऐसा खुद को निरंतर भान रहे तो भी बहुत अच्छा। ये तो बल्कि खुद का कैफ ढँकते रहते हैं।

कैफ का पता कब चलता है? 'आपका गलत है', ऐसा कहे तब। और वो कैफ जोख़िमकारक है, बहुत जोख़िमकारक है। जिस समझ से कैफ चढ़ता है, वह वीतरागों की बात नहीं है! यह तो, सभी लोगों को कैफ चढ़ता है। पुस्तकें पढ़ने से तो उल्टा कैफ चढ़ता है कि 'मैं कुछ जानता हूँ', ऐसा भान घुसा कि व्यक्ति मरा समझो। इसलिए ज्ञानी पुरुष के पास जाकर उनके चरणों में बैठो। तभी तो कृपालुदेव ने इन सारी झंझटों को छुड़वाया न! छोड़ो न! इस सप्तभंगी विषय में (शास्त्र के शब्दों पर) तो सालों तक भजन मंडली चलाते हैं। अरे! तो फिर मोक्ष में कब जाओगे? कौन-से गाँव आ गए हो? बाकी मोक्ष की किसी को पड़ी भी नहीं है। मोक्ष के बारे में भान ही नहीं है न! 'मैं जानता हूँ, मैं जानता हूँ', उस जानपने को दिखाने के लिए तूफान, तूफान, तूफान!

इस काल में तो बड़े-बड़े साधु महाराज, आचार्य, वे सब कैफ में ही रहते हैं। 'मैं जानता हूँ', वे अपनी खुद की ज़ोखिमदारी पर बोलते हैं न! हमारी ज़ोखिमदारी थोड़े ही है उसमें! अपनी-अपनी ज़ोखिमदारी पर बोल रहे हैं। सभी मार्ग भूल गए हैं, लेकिन क्या हो सकता है? उसमें उनका दोष नहीं है। उनकी इच्छा तो मोक्ष में जाने की ही है, भगवान की आज्ञा में रहने की ही है लेकिन काल विचित्र आया है, इसलिए नासमझी की *आँटी* (गांठ) पड़ गई है।

'मैं जानता हूँ' का कैफ

यह तो चार पुस्तकें पढ़कर 'स्वरूप' पाने का कैफ लेकर घूमता है। इसे तो 'स्वरूप' की एक बूँद भी प्राप्त की है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। जहाँ 'ज्ञान' होना बाकी है, वहाँ कैफ ही बढ़ता है। कैफ के कारण ज्ञानावरण और दर्शनावरण का निकलना बाकी है।

बहुत काल से शास्त्र का परिचय हो। बहुत पढ़ा हों न, तब फिर आपको अंदर शंकाएँ खड़ी होती हैं। यानी कि जितना जानता है, उससे तो बल्कि उतना ही अधिक खटकता है। उस जाने हुए को भगवान ने 'ओवरवाइज़पना' (अतिसयाना) कहा है। वे शंकाएँ ही इस संसार से बाहर नहीं निकलने देतीं।

पात्र तो उसे कहते हैं कि जो सरल हो। सरल, जैसे मोड़ना चाहें वैसे मोड़ सकें, ऐसा होना चाहिए, उसे पात्र कहा जाता है। अभी मैं पात्र किसे कहता हूँ? जो बहुत दारू पी कर आया हो और कहे, 'साहब मुझमें अक़्ल नहीं है, मेरा कुछ हल ला दीजिए।' तब मैं कहूँगा कि 'तू पात्र है'। पानी डालने से उसका नशा उतर जाएगा। किन्तु इन लोगों का सूक्ष्म नशा नहीं उतरेगा। 'मैं जानता हूँ' उसका दारू नहीं उतरेगा। इन साधु-संन्यासीयों का 'मैं जानता हूँ' का नशा उतरेगा? वह तो पूरा कैफ है और कैफ से कल्याण नहीं होता, कभी भी नहीं होता। वहाँ पर तो निष्कैफी का कल्याण है।

कैफ कम उतना जल्दी मोक्ष

शास्त्र पढ़े, उसका मानसिक बोझ, वह कैफ है। जितना कैफ कम होगा, उतना जल्दी मोक्ष होगा!

कैफी का मोक्ष कभी भी नहीं होता। 'मैं

कुछ जानता हूँ' यह तो बड़ा भारी कैफ है। नींद में भी वह कैफ रहेगा। मोक्ष तो निष्कैफी का होता है, कैफी का कभी भी नहीं होता। ये शास्त्र पढ़े, धारण किए, वे मोक्ष के साधन हेतु किए या कैफ बढ़ाकर, जन्मोंजन्म भटकने का साधन किया? शराबी का कैफ तो पानी डालते ही तुरंत उतर जाएगा, पर 'मैं कुछ जानता हूँ', वह शास्त्रों के पठन का कैफ कभी भी नहीं उतरेगा।

हमारे पास दो ही चीज़ें लेकर आना। एक, 'मैं कुछ नहीं जानता' और दूसरा, 'परम विनय'। 'मैं कुछ जानता हूँ', वह तो कैफ है

बाधक हैं स्वच्छंद और कैफ ही

निष्कैफी का मोक्ष होता है, ऐसा भगवान ने कहा है। कैफ, वह तो अत्यधिक सूक्ष्म अहंकार है, जो बहुत मार खिलाता है। इस स्थूल अहंकार को तो कोई न कोई दिखा देगा। कोई कहने वाला मिल जाएगा कि 'अरे, छाती तानकर क्या घूम रहा है? ज़रा झुक न!' तो वह संभल जाएगा। पर यह सूक्ष्म अहंकार, 'मैं कुछ जानता हूँ, मैंने कुछ साधन पा लिया है, मैं कुछ जानता हूँ', ऐसा कैफ वह तो कभी नहीं जाएगा।

स्वच्छंद तो बहुत बड़ा रोग है। इसकी जड़ को पहचान लेना है। पहचान लिया तो अच्छा रहेगा, वर्ना वह भटका देगा! स्वच्छंद की जड़ तो सभी में है ही, इसलिए आखिर तक जाग्रत रहना है क्योंकि स्वच्छंद का पेड़ उगने में क्या साल-दो साल लगते हैं? वह तो क्षण भर में बड़ा हो जाता है!

स्वच्छंद की जड़ क्या करती है, वह पता है? जिनके आश्रित रहते हों उनकी अधीनता तुड़वा देती है। इस स्वच्छंद की जड़ तो बहुत भारी होती है। वह खत्म जाए फिर तो वह 'ज्ञानी' ही बन जाएगा। जब तक यह है तब तक फूल नहीं आ सकते। 'ज्ञानी' में और आप में इतना ही फर्क है। आपकी स्वच्छंद रूपी जड़ खत्म नहीं हुई है।

स्वच्छंद क्या करता है कि जहाँ अभेद बुद्धि उत्पन्न हुई हो वहाँ भेद डाल देता है। 'ऐसा करूँगा, तभी मेरी कीमत रहेगी', ऐसा करके भेद डाल देता है। स्वच्छंद, वह तो प्रत्यक्ष ज़हर समान ही है। सब से बड़े भयस्थान ये स्वच्छंद और कैफ हैं!

एक जन्म, 'ज्ञानी' की अधीनता में

इसलिए हम क्या कहते हैं कि इस सत्संग की एकता मत छोड़ना। नहीं तो अलग मंडली बनाते की कोशिश करेगा। लेकिन कुछ भी करना नहीं आएगा। लोग धक्का मारकर निकाल देंगे! ऐसा नहीं चलेगा। कहीं चलता होगा? बनावटी बाघ कितने दिन तक चलेगा? बाघ की खाल पहनकर घूमें तो चलेगा क्या? वह पौधा उगे ही नहीं इसलिए कह दिया है, वह पौधा उगना ही नहीं चाहिए आपमें। आपको तो यह जन्म अधीनता में ही बिताना है। अधीनता मत छोड़ना क्योंकि मंडली बनाई जाए तो लोग इकट्ठे हो जाएँगे लेकिन उसमें खुद का अहित होगा और लोगों का भी अहित होगा।

अपने यहाँ एक व्यक्ति अलग दुकान लगाकर बैठा भी था। दो-चार जगहों पर 'दादा' के नाम पर कर आया सब कुछ। बड़ी-बड़ी सभाएँ की और सब कुछ करके आया। लेकिन मैंने कहा, 'अरे, मार खाएगा आखिर में। यह ओढ़ा हुआ कितने दिनों तक चलेगा?' ऐसे वापस पलट भी जाएगा। यों टेढ़ा नहीं हो पाएगा, लेकिन लालच घुस जाए, तो तू सोचेगा 'मैं कुछ कर आऊँ'। वह फिर ऐसा था भी कि मंडली जमा दे। एक बार तो हज़ारों लोग इकट्ठे कर लिए थे, क्योंकि

चेहरा ज़रा अच्छा था, भव्यता अच्छी थी! लेकिन उसे मैंने चेतावनी दे दी, ''ज़रा सी भी 'दादा' की अधीनता तू छोड़ेगा तो नर्क में जाएगा। तू शब्द कहाँ से लाएगा? ये मेरे ही शब्द कहने पड़ेंगे लोगों से। मेरे कहे हुए शब्द चलेंगे, लेकिन नए शब्द कहने जाएगा तो नर्क में जाएगा!'

यों मुझे चेतावनी देनी पड़ती है। ऐसा भी लालच होता है, 'दादा' से स्वतंत्र होने का! स्वतंत्र में मज़ा आता है, 'इन्टरेस्ट' आता है। रख न एक तरफ इन्टरेस्ट को! इसमें पड़ा रह न, इस सत्संग में ही!

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, स्वंतत्रता के बजाय 'मैं कुछ जानता हूँ' ऐसा दिखाने की इच्छा रहती है।

दादाश्री : वही झंझट है न! 'मैं जानता हूँ,' वही सब लेकिन जानता कुछ भी नहीं है। अब एक जन्म अधीनता में बिता दो।

'मैं जानता हूँ' - आपघाती कारण

प्रश्नकर्ता : क्या ऐसा कहा जा सकता है कि इस मोक्षमार्ग में सब से बड़ा बाधक कारण है, 'मैं जानता हूँ, मैं समझता हूँ'?

दादाश्री : हाँ, यह आपघाती कारण है।

प्रश्नकर्ता : उसे ज़रा अधिक स्पष्ट कीजिए न। वह छूट जाए तो कैसे लक्षण होते हैं? वह दोष बरतता हो तब कैसे लक्षण होते हैं? और उसके सामने किस तरह से जागृति रह सकती है?

सभी उल्टे व्यवहार 'इस' दोष से ही होते हैं। जिन्हें उल्टा कहा जाता है, वे सभी 'इस' दोष की वजह से ही होते हैं। मुख्य रूप से यह दोष कि 'मैं जानता हूँ!' बाकी सभी दोष उसके बाद में। इस दोष में से सब उगा है। *खेंच* (अपनी बात को सही मानकर पकड़े रखना) रहती है, वह इस दोष से ही, वर्ना सरलता होती है। जितना हमारे साथ ताल-मेल बैठता है, वैसा ही लोगों से ताल-मेल बैठना चाहिए। मेरे साथ क्यों ताल-मेल बैठ जाता है? जहाँ कुदरती रूप से ताल-मेल बैठ जाए, वह तो सहज चीज़ है। वहाँ आपका क्या पुरुषार्थ है? जहाँ ताल-मेल नहीं बैठता, वहाँ ताल-मेल बैठाना, वही पुरुषार्थ है।

यह रोग सभी में रहता है। 'मैं कुछ जानता हूँ,' इसे कैफ सहित ज्ञान बढ़ता जाता है। इस कैफ का अंतराय नहीं हो तब तो 'ज्ञान' बहुत अच्छी तरह से बढ़ जाएगा, 'फिट' हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह कैफ नहीं लाना हो तो भी कई बार आ जाता है।

दादाश्री : हाँ, वह तो हो जाता है, स्वाभाविक रूप से।

प्रश्नकर्ता : यह कैफ खत्म किस तरह से होता है?

दादाश्री : उसे उत्पन्न ही नहीं होने देना चाहिए। वर्ना उत्पन्न होने के बाद कैफ बंद नहीं होता, फिर वह खत्म नहीं होता इसलिए उसे उत्पन्न ही नहीं होने देना है। उसी तरह, वह उत्पन्न ही नहीं हो ऐसी जागृति रखनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : वह कैफ उत्पन्न नहीं हुआ, उसका पता चलता है खुद को?

दादाश्री : चेहरा सुंदर दिखाई देता है। बहुत सुंदर दिखाई देता है, काला हो फिर भी बहुत सुंदर दिखाई देता है। ये तो सभी बदसूरत दिखाई देते हैं! पता नहीं चले ऐसा होता होगा भला? यह सब्ज़ी ताज़ी है या दो दिन पुरानी है, उसका पता नहीं चलता? उसके जैसी है यह बात। यह

क्या कोई सूक्ष्म बात है? इसका तो ऊपर से ही पता चल जाता है। सभी में कम या ज़्यादा कैफ होता है। कुछ ही लोग उससे निवृत्त हो जाते हैं, जो समझ चुके हैं वे। जहाँ कैफ होता है वहाँ लावण्य नहीं दिखाई देता। अजागृति से यह सब होता है। जागृति हो तो कुछ भी नहीं होता। अजागृति से ऐसी गलत चीज़ का उत्पादन हो जाता है, जागृति से नहीं होता।

ज्ञान के बाद जानपने का नया पौधा

प्रश्नकर्ता : दादा, ऐसा दोष उत्पन्न होने लगे, तब कैसी जागृति रखनी चाहिए?

दादाश्री : वह तो, अगर ज़बरदस्त जागृति रहेगी तो उत्पन्न नहीं होगा। इसे तो जागृति ही नहीं कहेंगे न! जागृति रहेगी तो ऐसा पौधा पैदा ही नहीं होगा न! यह कैफ का पौधा तो 'ज्ञान' होने के बाद उगा है, यह पौधा बाद में ही उगा है। 'ज्ञान' दिया, उस घड़ी वे सभी पुराने पौधे तो खत्म हो गए लेकिन बाद में यह नया पौधा पैदा हुआ। अगर जागृति रहे तो वह नहीं उगेगा। यह जो कुछ भी है, वह सारा अजागृति से ही है। ढेर सारी अजागृति होती है। एकाध-दो गुणों जितनी अजागृति नहीं। कितनी सारी स्थूल अजागृति हो तब जाकर यह उत्पन्न होता है। वर्ना पैदा ही नहीं होगा न!

प्रश्नकर्ता : इसमें किस बाबत की जागृति रहनी चाहिए?

दादाश्री : सभी बाबत की। उगे नहीं ऐसा चाहिए। यह पैदा क्यों हुआ? पैदा होता है वही अजागृति है। जागृति उतनी कम कहलाती है। पैदा ही क्यों होगा? कषाय होते हैं उस समय क्यों जागृति आ जाती है? सामने वाला व्यक्ति कषाय कर रहा हो, तब भी जागृति आ जाती है। खुद को कषाय होता है तब भी जाग्रत! यह तो कषाय से भी अधिक खराब, आत्मघाती तत्व है यह! अपना घात करता है। यदि इस 'ज्ञान' के बाद कैफ चढ़ जाए तो कितनी उल्टी समझ कहलाएगी? ज्ञान जानने का कैफ?

प्रश्नकर्ता : दादाजी, कषाय तो संयोग से खड़ा होता है। संयोग आए तब जागृति रह सकती है, वह निरंतर रहे, ऐसी चीज़ नहीं है। जबकि यह जो कैफ है, वह निरंतर अंदर पड़ा रहता है?

दादाश्री : यह तो उगता ही रहता है, पानी की भी छिँटाई होती रहती है, रात-दिन की अजागृति से। उसी को आपघाती कहता हूँ न! 'जान लिया' तो उसे कहते हैं कि सभी प्रकार के कैफ उतर जाएँ।

प्रश्नकर्ता : अभी किसी से दादाजी के 'ज्ञान' के बारे में बात करते हैं, तो पहले मन में ऐसा रहता है कि 'मैं जानता हूँ।'

दादाश्री : हाँ, बस वही यह रोग है न!

प्रश्नकर्ता : तो बात किस तरह करें, दादाजी?

दादाश्री : लेकिन वह बात तो, उसमें बरकत ही नहीं आती, कुछ मेल ही नहीं खाता न! सामने वाले को 'फिट' ही कैसे होगा? 'मैं जानता हूँ' वह बहुत बड़ा रोग है!

इसलिए हम कहते हैं न, सामने वाले के साथ हम पहले 'यह' (लेवल) मिलाते हैं। हममें वह रोग नहीं है, इसलिए वह (लेवल) बैठ जाता है। हममें यह रोग बिल्कुल भी नहीं है। ऐसे कोई रोग हममें नहीं हैं। हमारे साथ बैठने से सभी रोग चले जाते हैं। पूछ-पूछकर कर लेना। यों ही बैठे रहोगे, तो वह भी काम का नहीं है।

किसी के साथ झंझट हो जाए तो 'मैं जानता हूँ' वह उसके मन में, लक्ष में होता है और बातचीत करने जाता है, तो केस पूरा बिगड़ जाता है। 'लेवल' नहीं मिल पाता न! 'लेवल' आएगा ही नहीं न!

रोग उत्पन्न हो वहाँ सचेत हो जाओ

प्रश्नकर्ता : दादाजी, जागृति ऐसी रहनी चाहिए न कि ज़रा सा भी गलत विचार आए कि तुरंत, हर एक सेकन्ड में पकड़ में आ जाए।

दादाश्री : हाँ, वह पकड़ में आ जाए तो बहुत हो गया। उगते ही पकड़ में आना चाहिए। इसलिए हम कहते हैं कि, निदाई कर देना, उगते ही, दूसरा भाग दिखे कि निदाई कर देना। लेकिन जागृति के बिना ऐसा कैसे हो सकता है? और बहुत बड़ी जागृति की ज़रूरत है। हम ऐसी आशा भी कैसे रख सकते हैं? इसलिए बहुत आशा नहीं रख सकते न!

इसलिए उपाय करना चाहिए। कोई आकर कहे, 'आपका ज्ञान बहुत ऊँचा है।' उस घड़ी समझ जाना कि यहाँ रोग उत्पन्न हो जाएगा अभी। रोग उत्पन्न होने का प्रत्यक्ष कारण! आपको वहाँ सावधान हो जाना है।

पहले कभी इसमें मिठास बरती थी? जिस दिन मिठास बरते, उस दिन वह उगता है और फिर से मिठास बरते तो इतनी बड़ी कोंपलें फूटेंगी। जैसे आम की कोंपलें निकलती हैं न! दो पत्तियों से इतनी बड़ी, दूसरी दो पत्तियाँ उग निकलें तो इतना बड़ा हो जाता है, इस तरह बढ़ता जाता है। मिठास का पानी आप पी गए कि बढ़ गया। 'क्या चंदूभाई, आप तो ओहोहो, ज्ञानी ही हो गए!' तो यह सुनकर अगर मिठास आई कि उगा अंदर!

अब अगर ऐसा हो जाए न, तो वहाँ पर दूसरा उपाय करना, तुरंत मिटा देना। जो बीज पड़ा है, उसका रोग तो स्वाभाविक तौर पर उत्पन्न हो जाता है लेकिन उपाय है अपने यहाँ। अपने यहाँ यह 'विज्ञान' उपाय रहित नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : नहीं, यहाँ के एक-एक वाक्य ऐसे हैं कि सभी रोगों को खत्म कर दें।

दादाश्री : हाँ, उपाय हैं अपने यहाँ। इसका मूल इसमें से उगता है कि 'बहुत अच्छा हो गया है', इसकी मिठास बरती कि फूटा! और यह चीज़ मीठी है न! मोक्ष की तरफ का भुला दें, ऐसी।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह ज़ोखिम है, ज़बरदस्त ज़ोखिम है, मोक्षमार्ग के लिए।

दादाश्री : ज़ोखिम, आत्मघाती! कोई ऐसा कहे तब कहना, 'भाई, मेरी बात तो मैं ही जानता हूँ, आपको क्या पता चलेगा?' तब फिर वह शांत हो जाएगा। आपको क्या गुरु बन बैठना है?

प्रश्नकर्ता : दादा, छूटने जैसा है इसमें से।

दादाश्री : बहुत बड़ा फँसाव! ये तो हम सारे भयस्थान दिखा रहे हैं। भयस्थान नहीं दिखाएँगे न, तो सब उल्टा हो जाएगा।

मोक्षमार्ग के भयस्थान

ये सभी भय सिग्नल जानने ही पड़ेंगे न? यों ही कुछ चलता होगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं, बड़े से बड़े ज़ोखिम हैं ये तो।

दादाश्री : आत्मघाती तत्व कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : और फिर वह आगे बढ़ने ही नहीं देता, दूसरा नया ज्ञान उत्पन्न होने भी नहीं देता।

दादाश्री : होने ही नहीं देगा न! पूरा आत्मघात कर देता है न! जो है न, उसी को वापस गिराता रहता है। अत: जो कुछ मोक्षमार्ग में बाधक हो उसे छोड़ देना और आगे बढ़ना फिर से। वह ध्येय से पर कहलाता है न! खुद का ध्येय चूके नहीं, कैसी भी कठिन परिस्थितियों में भी खुद का ध्येय नहीं चूके, ऐसा होना चाहिए।

आपका ध्येय अनुसार चलता है क्या कभी? उल्टा नहीं कुछ भी? यह तो सहज हो गया है, नहीं?

प्रश्नकर्ता : अंदर 'हैन्डल' मारते रहना पड़ता है।

दादाश्री : चलाते रहना पड़ता है? लेकिन क्या वे अंदर वाले मान जाते हैं? तुरंत ही?

प्रश्नकर्ता : तुरंत ही।

दादाश्री : तुरंत? देर ही नहीं? यह अच्छा है। जितना वे मानेंगे, उतना ही वह मुक्त होने की निशानी है। उतने ही आप उनसे अलग हैं, वह निशानी है उसकी। क्योंकि खुद कोई रिश्वत नहीं लेता। रिश्वत लेगा तो वे बात नहीं मानेंगे। 'खुद' उनसे रिश्वत खाता है तो वे आपकी बात नहीं मानेंगे फिर। 'खुद' स्वाद ले आता है, फिर 'अंदर वाले' नहीं मानते।

यह व्यवहार तो उस ओर ही ले जाता है न! अनादि से जिसकी आराधना की है, वह यही एक मार्ग है न! व्यवहार तो हमेशा ही उस तरफ की आदत वाला होता है न! अत: अगर उस तरफ जाए तो भी हमें अपने ध्येय के अनुसार चलाना है। बैल तो पुराना रास्ता देखे तब उसी रास्ते पर चलता जाता है। आपको अब अपने रास्ते पर ध्येय के अनुसार चलना है। इस रास्ते से नहीं, दूसरे रास्ते से जाना है। 'ऐसे चल' कहना और खुद रिश्वत नहीं लेता है तो अंदर वाले तुरंत ही कहे अनुसार मुड़ जाते हैं लेकिन अगर रिश्वत लेता है तो फिर मार खिलाते हैं, हर बात में मार खिलाते हैं। इसलिए ध्येय से पीछे नहीं हटना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : वह रिश्वत कैसी होती है?

दादाश्री : चख आता है और चखते समय फिर मीठा लगता है न, तो वहाँ पर बैठ जाता है। 'टेस्ट' कर आया इसलिए फिर थोड़ी एकाध-दो बोतल पी आता है।

ये सारी चोर नीयत कहलाती है। ध्येय पर चलना है, वह और चोर नीयत, ये दोनों साथ में कैसे रह सकते हैं? नीयत साफ रखनी चाहिए, कोई भी रिश्वत लिए बगैर। यह तो वह मस्ती चखने की आदत होती है, इसलिए ऐसे वहाँ बैठकर ज़रा, वह मस्ती के आनंद में रहता है।

प्रश्नकर्ता : यानी प्रकृति की मस्ती?

दादाश्री : तो फिर और क्या? उसे उसी की आदत पड़ गई है न! इसलिए 'आप' कहो कि, 'नहीं, हमें तो अब ऐसे जाना है। मुझे मस्ती नहीं चाहिए। हमारे ध्येय के अनुसार चलना है।' ये प्रकृति की मस्तियाँ तो भूल-भूलैया में ले जाती हैं।

जो ध्येय तुड़वा दें, वे आपके दुश्मन हैं। आपके ध्येय को नुकसान पहुँचाए वह कैसे पुसाएगा? यहाँ तो खुद का मन इतना मज़बूत कर लेना है न, कि ''इस जन्म में जो हो, भले ही देह जाए, लेकिन इस जन्म में कुछ 'काम' कर लूँ'' ऐसा तय करके रखना चाहिए तब फिर अपने आप काम होगा ही। आपको अपना तय करके रखना चाहिए। ऐसा प्राप्त हो तब आपकी तरफ से ढील नहीं रखनी है।

जय सच्चिदानंद

आत्मा में कैसे रहना है?

प्रश्नकर्ता : अब बाहर नहीं रहना है, आत्मा में ही रहना है तो ऐसे कैसे रहना है?

दादाश्री : पहले चंदूलाल में कैसे रहते थे? उसकी कोई कोठरी-वोठरी थी? पहले चंदूलाल थे न आप? क्या वास्तव में चंदूलाल थे?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : चंदूलाल का नाम लेकर कोई बात करे और वह बात सुनाई दे, बीच में दीवार हो तब भी सुनकर फिर मुँह बिगड़ जाता था। इसलिए, आप चंदूभाई थे, वह बात निर्विवाद हो गई। अब आप आत्मा हो तो चंदूलाल बिल्कुल भी नहीं हो, चंदूलाल की चाहे कितनी भी बातें हों। रूबरू बातें हों, लेकिन आप आत्मा हो! चंदूलाल से आपको क्या लेना-देना? यानी वहाँ कोई रूम-वूम, कुछ है नहीं। इस तरह आत्मा में रहने का यह उपयोग सेट करो। 'मैं चंदूलाल हूँ' वह उपयोग चला गया और 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह उपयोग रहा। इस उपयोग में वह पहले वाला उपयोग न घुस जाए, उसे जानना है, वहाँ जागृति में रहना है। है कुछ ऐसा कि दिक्कत आए? बस, इतना ही। जैसे कि जब चंदूलाल थे, तब आपको कोई रूम नहीं रखना पड़ता था। यों ही, अंदर हाथ-पैर सारा पूरा शरीर चंदूलाल ही था। और अब, सब आत्मा रूप हो जाना चाहिए। 'मैं आत्मा हूँ' यानी वह सारा वर्तन हो पाए या नहीं, उससे आपको लेना-देना नहीं है। लेकिन 'मैं आत्मा हूँ', ऐसा भान आपको निरंतर रहना चाहिए। क्योंकि जब शराब का असर था तब वह पूरे (शरीर) में फैल गया था। और क्या कहता था? 'मैं तो प्रेसिडेन्ट ऑफ इन्डिया हूँ।' अरे भाई, अभी दो घंटे पहले तो तू कहता था कि, 'हम तो चंदूलाल सेठ हैं' और ऐसा कैसे कह रहा है? तब कहता है, किसी का कोई असर है उस पर। उस असर से ऐसा बोल रहा है। वह असर चला जाएगा उसके बाद वह जो था वही, चंदूलाल कहेगा फिर। यानी कि आप पर इस जगत् का असर हुआ है, लोगों की तरह। इसी कारण आपने चंदूलाल कहा, लेकिन वास्तव में आप शुद्धात्मा ही हो।

लेकिन उसका असर तो उतर जाता है यों ही, दो घंटे बाद। यह नहीं उतरता, ऐसा है। क्योंकि रोज़ाना खुराक लेता है न! शराब तो, पीना बंद करने पर नशा उतर जाता है लेकिन इसे तो सुबह-शाम पीता ही रहता है, चढ़ता ही जाता है और फिर पाँच लोग ऐसा कहने वाले मिल जाते हैं कि, 'चंदूभाई की तो बात ही क्या करनी! दो लाख रुपये खर्च किए हैं।' तब चंदूभाई को फिर से उसका नशा चढ़ता है, ऐसा सुनते ही, तुरंत! ऐसी शराब पिलाते ही रहते हैं लोग। तब कुछ उतारने वाले भी मिल जाते हैं। 'कुछ अक्ल नहीं है आप में', तब फिर नशा उतर भी जाता है, थोड़ी देर। वह जो उतर जाता है, वह उसे

पसंद नहीं आता फिर। अरे भई, नशा उतरा, वह तो बल्कि अच्छा हुआ। तब कहता है, 'नहीं, इससे तो लेकिन मेरी आबरू गई न!' भले ही नशे में था, लेकिन आबरू थी न! अपमान करने पर उतर जाता है नशा, लेकिन साथ-साथ वह बैर बाँध लेता है। 'मेरी चपेट में आना चाहिए', कहेगा।

आप यह चंदूलाल नहीं हो, और शुद्धात्मा हो जाना है। और क्या ज़रूरत है? आपको सचमुच ऐसा विश्वास हो गया कि, 'वास्तव में मैं चंदूलाल नहीं हूँ और चंदूलाल की दौलत तो उसी की है, मुझे क्या लेना-देना? और वह सारी दौलत भी हमने देखी है। वह सारी विनाशी दौलत थी। खो जाने के बाद मिलती नहीं और अगर मिल जाए फिर भी वापस खो ही जानी है जबकि मेरी यह दौलत तो विनाशी नहीं है, अविनाशी है! मेरी यह दौलत अलग है।' पहले ऐसा भान होता है कि 'मैं शुद्धात्मा हो गया'। फिर उसका अनुभव होता जाता है और फिर उसी रूप होता जाता है। इसलिए शास्त्रकारों ने क्या लिखा कि एक सेकन्ड के लिए भी आत्मा बन और तू आत्मा होकर बोल कि, 'मैं आत्मा हूँ'। हुए बगैर मत बोलना। तो आत्मा बनेगा कब? जब ज्ञानी पुरुष उसे स्थित कर देंगे तब। ऐसा हो जाने के बाद वह कहता है कि, 'अब मैं आत्मा हो गया।' उसके बाद ऐसा बोल 'मैं शुद्धात्मा हूँ, शुद्धात्मा', बोलता रह लेकिन अगर हुए बगैर गाता रहेगा तो उससे क्या बदलेगा? 'वैसे तो नगीन भाई हूँ', लेकिन रात भर ऐसे गाता रहता है 'मैं शुद्धात्मा हूँ'। लेकिन नगीन भाई को गाली दी तो फिर से जैसे थे वैसे ही!

आज्ञा पालन करने का हेतु क्या है कि निरा खराब काल है सर्वत्र, जहाँ देखो वहाँ लूट, लूट और लूट। यानी कि कुसंग ही है सारा। संग ही कुसंग हो गया है। इसलिए आप इन आज्ञाओं के अनुसार रहना तो फिर कुसंग छूएगा नहीं और फिर ये आज्ञाएँ भी आसान हैं। ऐसी कोई खास... बहुत कठिन नहीं हैं।

(परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी में से संकलित)

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए भारत में टी.वी. चैनल पर...

- **'साधना'** पर हर रोज़ सुबह 7-50 से 8-15 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन उत्तरप्रदेश'** पर हर रोज़ सुबह 7-30 से 8 और दोपहर 3 से 4 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-45 (मराठी में)
- **'आस्था कन्नड़ा'** पर हर रोज़ दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में)
- **'दूरदर्शन चंदना'** पर हर रोज़ शाम 7 से 7-30 (कन्नड़ा में)
- **'दूरदर्शन गिरनार'** पर रोज़ सुबह 7-30 से 8-30, रात 9-30 से 10-30 (गुजराती में)
- **'वालम'** पर हर रोज़ शाम 6 से 7 (सिर्फ गुजरात राज्य में) (गुजराती में)

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में सत्संग कार्यक्रम

अडालज

2 जनवरी - परम पूज्य दादाश्री की पुण्यतिथि पर विशेष कार्यक्रम
3 जनवरी (शनि) शाम 5 से 7 - **सत्संग** और **4 जनवरी** (रवि) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

इंदौर

9-10 जनवरी (शुक्र-शनि) शाम 5 से 8 - **सत्संग** और **11 जनवरी** (रवि) शाम 4-30 से 8 - **ज्ञानविधि**
स्थल : बास्केटबॉल कॉम्प्लेक्स, रेस कोर्स रोड, इंदौर. **संपर्क :** 9644544455

थाणे त्रिमंदिर प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

30 जनवरी (शुक्र) सुबह 10 से 12-45 - **श्री शिव मंदिर में स्थापित सभी भगवंतो की प्राणप्रतिष्ठा**
31 जनवरी (शनि) सुबह 10 से 12-45 - **श्री कृष्ण मंदिर में स्थापित सभी भगवंतो की प्राणप्रतिष्ठा**
शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**
1 फरवरी (रवि) सुबह 10 से 12-45 - **श्री सीमंधर स्वामी मंदिर में स्थापित सभी भगवंतो की प्राणप्रतिष्ठा**
स्थल : त्रिमंदिर, ग्लोबल हॉस्पिटल के पास, बालकुम पाड़ा, माजिवडा, थाणे, महाराष्ट्र. **संपर्क :** 9323528901
सूचना : प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव में रहने की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाएगी, रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक है। रजिस्ट्रेशन की अधिक जानकारी Akonnect ऐप के द्वारा दी जाएगी।

राजकोट

7 & 9 फरवरी (शनि-सोम) शाम 7 से 10 - **सत्संग** और **8 फरवरी** (रवि) शाम 5 से 8-30 - **ज्ञानविधि**
स्थल : ओपन ग्राउन्ड, मवडी इन्डोर स्टेडियम के सामने, 80 फूट रोड, मवडी, राजकोट. **संपर्क :** 9909977440

वेरावल त्रिमंदिर प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

13 फरवरी (शुक्र) शाम 5-30 से 8-30 - **सत्संग**
14 फरवरी (शनि) शाम 5 से 8-30 - **ज्ञानविधि** (नए मुमुक्षुओं के लिए)
15 फरवरी (रवि) सुबह 10 से 12-30 - **प्राणप्रतिष्ठा** और शाम 4-30 से 7-30 - **प्रक्षाल-पूजन-आरती**
स्थल : त्रिमंदिर, डिवाईन रिसोर्ट के पास, छत्रोडा सर्विस रोड, वेरावल. **संपर्क :** 9924344459
विशेष सूचना : प्राणप्रतिष्ठा कार्यक्रम केवल एक दिन का है, इसलिए रात्रि आवास की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाएगी।
जो महात्मा-मुमुक्षु उसी दिन सीधे ही महोत्सव स्थल पर पहुँचेंगे, उनके लिए बाथरूम-टोइलेट की सुविधा स्थल पर रहेगी।

दिल्ली

27-28 फरवरी (शुक्र-शनि) शाम 5-30 से 8-30 - **सत्संग** और **1 मार्च** (रवि) शाम 5 से 8-30 - **ज्ञानविधि**
स्थल : JMD टेंट्स, स्वर्ण जयंती पार्क, सेक्टर 10, रोहिणी, दिल्ली. **संपर्क :** 8920648993, 8287705272

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687, **भावनगर :** 9313882288, **अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडा: +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

भक्ति

ज्ञानविधि

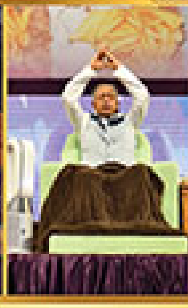

जन्मजयंती का दिन

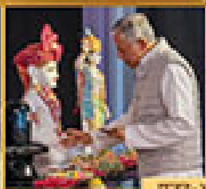

पूजन-आरती

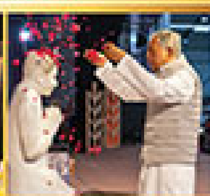

मुख्यमंत्री श्री भूपेन्द्रभाई पूज्यश्री का अभिवादन करते हुए

दृष्टि दर्शन

थीम पार्क- चिल्ड्रन पार्क

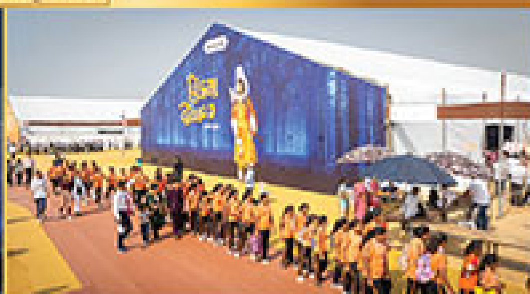

जन्मजयंती ग्राउन्ड का एरियल व्यू

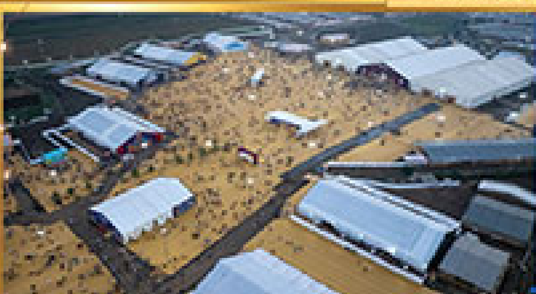

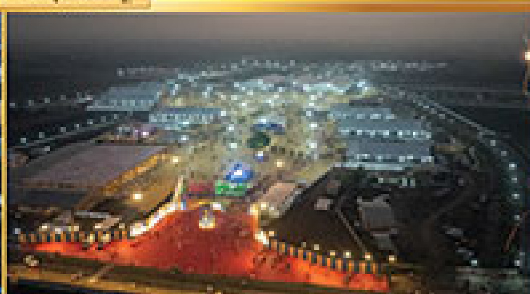

दिसम्बर 2025
वर्ष-21 अंक-2
अखंड क्रमांक - 242

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Licensed to Post Without Pre-payment
No. PMG/NG/036/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

पाँच आज्ञा रूपी प्रोटेक्शन बाड़

यह काल कैसा है कि सर्वत्र कुसंग है। रसोईघर से लेकर ऑफिस में, घर में, रास्ते में, बाहर, गाड़ी में, ट्रेन में, इस तरह सब जगह कुसंग ही है। कुसंग है, इसलिए मैंने आपको दो घंटों में दिया हुआ यह ज्ञान है, वह कुसंग ही खा जाता है। कुसंग नहीं खा जाता? तो उसके लिए पाँच आज्ञाओं की प्रोटेक्शन बाड़ दी हैं, यदि यह प्रोटेक्शन करते रहोगे तो अंदर दशा में ज़रा भी फर्क नहीं पड़ेगा। यह ज्ञान उसे दी गई स्थिति में ही रहेगा। यदि यह बाड़ टूट गई तो वह ज्ञान को खत्म कर देगा, धूल में मिला देगा। इसलिए इन आज्ञा में निरंतर रहना।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road, At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.